Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2017-19
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th March 2019
Date of posting 15th & 20th March 2019

मार्च 2019 वर्ष 31 अंक 03 मूल्य ₹ 40

# इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

# महासागर का कचराघर

## (द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच)

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
मार्च 2019
वर्ष 31
अंक 3

# इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

**सलाहकार मण्डल**

शरदचंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी, डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे, डॉ. अशोक कुमार ग्वाल, डॉ. आर.एन.यादव, डॉ. सुनील कुमार श्रीवास्तव, प्रो. राकेश कुमार पाण्डेय, प्रो. अमिताभ सक्सेना

**संपादक**

संतोष चौबे

**कार्यकारी संपादक**

विनीता चौबे

**उप-संपादक**

पुष्पा असिवाल

**सह-संपादक**

मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

**संस्थागत सहयोग**

गौरव शुक्ला, डॉ. डी.एस.राघव, डॉ. विजय सिंह, डॉ. सीतेश सिन्हा, रवि चतुर्वेदी, डॉ. मुनीष गोविंद, डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला

**राज्य प्रसार समन्वयक**

शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, लियाक़त अली खोखर, राजेश शुक्ला, दर्शन व्यास, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार, ए.के.सिंह, निशांत श्रीवास्तव, रजत चतुर्वेदी, एम. किरण कुमार, बिनीस कुमार, कुमार अभिषेक, आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, अजीत चतुर्वेदी, अमिताभ गांगुली, नरेन्द्र कुमार, इंद्रनील मुखर्जी

**क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक**

राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद, आर.के. भारद्वाज, प्रवीण तिवारी, अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, मनीष खरे, कुम्भलाल यादव, सचिन जैन, रूपेश देवांगन, राहुल चतुर्वेदी, नीरज नागर, संतोष उपाध्याय, असीम सरकार

**समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन**

राजेश पंडा

**आवरण एवं डिजाइन**

वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

ऐसा कहना बिलकुल सही है कि युक्तिसंगत सोच और सावधानी से किया गया मापन एक वैज्ञानिक के काम का हिस्सा ठीक उसी तरह होते हैं, जिस तरह हथौड़े और छेनी एक मूर्तिकार के लिए होते हैं। लेकिन दोनों उदाहरणों में ये मात्र औजार का काम करते हैं, न कि उस कार्य की अंतर्वस्तु का।

– वर्नर हाइजेनबर्ग

# इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 296

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

## क्रम

### विज्ञान आलेख

भारत का अंतरिक्ष युग में प्रवेश
● शुकदेव प्रसाद/05

क्षय रोग : आज भी एक चुनौती
● डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र/10

### विज्ञान हस्तक्षेप

ऊर्जा का प्राकृतिक ख़जाना : जैव ईंधन
● डॉ.विनीता सिंघल/13

महासागर का कचराघर- द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच
● डॉ. शुभ्रता मिश्रा/19

### विज्ञान भौतिक

'स्वर्ण'-उत्पत्ति का रहस्य : चौथी गुरुत्वीय तरंग
● डॉ.कपूरमल जैन/23

मृदा को स्वस्थ रखने की आवश्यकता
● डॉ. दिनेश मणि/26

सावधान ! डिजिटल बदलाव कहीं बाधक न बन जाए
● शंभु सुमन/29

इसरो-कामयाबी और भविष्य की योजनाएँ
● शशांक द्विवेदी/34

### कॅरियर

रोबोटिक इंजीनियरिंग
● संजय गोस्वामी/36

### विज्ञान इस माह

वर्ष का अन्तिम सुपरमून और आकाशगंगा दर्शन
● इरफॉन ह्यूमन/40

### विज्ञान गतिविधि

प्रकृति के सुरम्य वातावरण में विज्ञान की कार्यशाला
● राग तेलंग/46

### संस्थागत समाचार

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल,
सी.वी.रामन विश्वविद्यालय, बिलासपुर/48


### तकनीक

पत्र व्यवहार का पता

**इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए**

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-2700466 (डेस्क), 2700400 (रिसेप्शन)

e-mail : electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- प्रति अंक : 40/-



'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।



स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा आईसेक्ट पब्लिकेशन्स, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

# भारत का अंतरिक्ष युग में प्रवेश

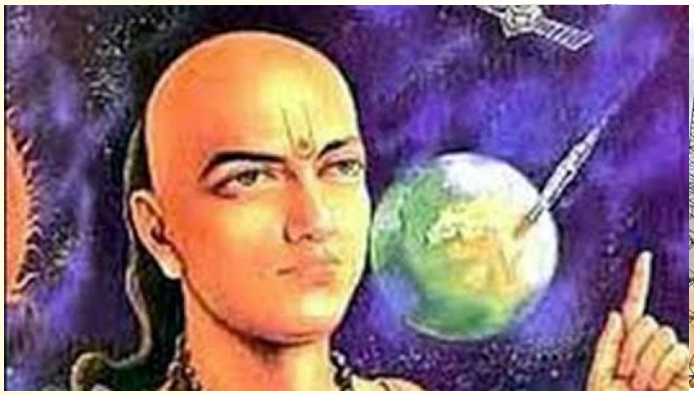

शुकदेव प्रसाद

'यदि हमें विकसित, उन्नत राष्ट्रों के मुकाबले उनके सामने आना है, तो हमें बैलगाड़ी को रफ्तार देनी होगी। वस्तुतः धरती के संसाधनों एवं बाह्य अंतरिक्ष के सामान्य एवं व्यापक उपयोगों हेतु हमें अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी में दक्षता प्राप्त करनी ही होगी, अन्यथा हम पीछे रह जाएंगे।'

– डॉ.विक्रम साराभाई

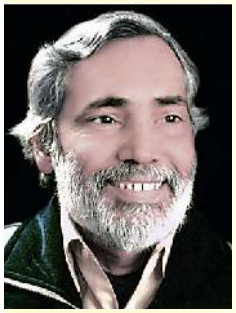

*समकालीन विज्ञान लेखकों में शुकदेव प्रसाद का नाम अग्र पंक्ति में शुमार है। वे पिछले चार दशकों से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। देश विदेश में वे अपने विज्ञान लेखन के लिए उन्हें कई पुरस्कार और सम्मान प्रदान किये गये हैं। सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार से सम्मानित वे एक मात्र भारतीय विज्ञान लेखक हैं। कई विज्ञान किताबों की रचना के साथ ही उन्होंने विज्ञान ग्रंथों और संचयन का संपादन किया है। शुकदेव प्रसाद इलाहाबाद में रहते हैं।*

भारत में अंतरिक्ष युग के प्रणेता महान विज्ञानी स्व. डॉ. साराभाई का दृढ़ विश्वास था कि आर्थिक तथा सामाजिक प्रगति के इच्छुक विकासोन्मुख देशों के लिए बाह्य अंतरिक्ष के अनेक उपयोग अत्यंत लाभदायक हो सकते हैं। तभी तो उन्होंने थुंबा और श्रीहरिकोटा में राकेटों के प्रक्षेपण केंद्र खोले और राकेटों के विकास पर जोर दिया।

20 नवम्बर, 1967 को भारत ने अंतरिक्ष संबंधी प्रयोगों की दुनिया में प्रवेश किया। थुंबा केंद्र से मात्र 75 मिलीमीटर व्यास वाले अपने सर्वप्रथम एक चरणीय राकेट 'रोहिणी-75' का सफल प्रक्षेपण किया गया। यों उस समय इसे खिलौना कह कर इसका मखौल उड़ाया गया था। पर जब RH-75 ने आशातीत परिणाम प्रदर्शित किये तो सभी ने एक स्वर से स्वीकारा कि मात्र आकार ही सब कुछ नहीं है। प्रश्न यह है की तकनीकी रूप से दक्षता प्राप्त कर ली गई है अथवा नहीं। और वह भारत ने प्राप्त कर ली थी।

इस अनुभव के बाद डॉ. साराभाई ने रोहिणी राकेट की विकास शृंखला में RH-100, RH-125, RH-200 एवं RH-300 जैसे राकेटों के विकास का सपना देखा। इस सपने को पूरा करने के लिए उन्होंने अपने सिखाये हुए युवा विशेषज्ञों को विभिन्न कामों में लगा दिया। सभी ने अपने दायित्व संभाले और समय पर रोहिणी शृंखला के उपर्युक्त राकेटों का विकास हुआ।

इतना ही नहीं 'मेनका-1' और 'मेनका-2' तथा 'सेंतोर' और RH-560 का विकास किया गया और धीरे-धीरे हमने विकास की कई मंजिलें पार कर लीं।

अंतरिक्ष विज्ञान प्रौद्योगिकी केंद्र (अब विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र) की डायरी से इस बात का आभास मिलता है कि 1968 में ही 38-40 किलोग्राम भार के भारतीय उपग्रह 'रोहिणी' को धरती की लगभग 400 किमी की वृत्तीय कक्षा में स्थापना हेतु उपग्रह प्रक्षेपण राकेट के विकास की बातें सोची जा रही थीं और इस दिशा में यत्न भी किये जा रहे थे, लेकिन प्रायः इसी काल में डॉ. साराभाई ने यह अनुभव कर लिया था की यदि हम भारतीय राकेट तकनीक पर आधारित कृत्रिम उपग्रह अंतरिक्ष में छोड़ने का विचार करेंगे तो इस कार्य में किंचित विलम्ब होने की सम्भावना है अतः उन्होंने यह निर्णय लिया कि क्यों न हम भारतीय उपग्रह दूसरे देशों के सहयोग से अंतरिक्ष में छोड़ें और साथ ही शक्तिशाली राकेट बनाने की दिशा में तेजी से अनुसंधान कार्य किये जायें।

विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र, त्रिवेंद्रम में उपग्रह प्रणाली प्रभाग के प्रमुख डॉ.यू.आर.राव के शब्दों में 'उपग्रहों की उपयोगिता को देखते हुए यह निश्चय किया गया कि तत्कालीन जितनी जल्दी हो सके, हमें उपग्रह निर्माण की दिशा में सक्षम होना चाहिए और इसीलिए जब सोवियत संघ ने भारतीय उपग्रह को अंतरिक्ष में पहुँचाने की रुचि दिखलाई तो हमने उसका स्वागत किया।'

## सोवियत संघ का दोस्ती भरा हाथ

दरअसल इस कार्य में सोवियत संघ में भारत के राजदूत श्री दुर्गा प्रसाद धर (अब स्वर्गीय) की भी अहम भूमिका थी। शीघ्र ही डॉ. साराभाई और सोवियत संघ के दिल्ली स्थित राजदूत श्री पेगोव के बीच भारत के भावी उपग्रह (जिसका नामकरण आगे चलकर 'आर्यभट' किया गया) के निर्माण और प्रक्षेपण संबंधी बुनियादी बातचीत हुई। शुरुआत अच्छी हुई और उसका परिणाम यह रहा की डॉ. साराभाई ने 9 अगस्त 1971 को भारतीय वैज्ञानिकों का एक प्रतिनिधि मंडल मास्को भेजा। इस प्रतिनिधि मंडल (श्री एच.जी.एस.मूर्ति, प्रो.यू.आर.राव, प्रो.सत्य प्रकाश, डॉ.कुलकर्णी) ने सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी से विचार विमर्श करके निर्णय लिया की भारत में डिजाइन्ड और निर्मित उपग्रह को सोवियत कास्मोड्रोम से सोवियत राकेट से, अंतरिक्ष में छोड़ा जाये।

इसी बीच दिसंबर 1971 में डॉ. साराभाई का निधन हो गया। फिर डॉ.एम.जी. के.मेनन को 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन' की जिम्मेदारी सौंपी गयी। डॉ. साराभाई के निधन से इस कार्य में थोड़ी शिथिलता तो जरूर आई थी लेकिन युवा वैज्ञानिकों ने डॉ. साराभाई के छोड़े गए कार्यों को पूरा करने का संकल्प लिया तो फिर काम तेजी से आगे बढ़ गया। फरवरी, 1972 में प्रो. मिलोगिन के नेतृत्व में सोवियत एकेडमी ऑफ साइंसेज का एक प्रतिनिधि मंडल त्रिवेंद्रम आया और यहाँ प्रतिनिधि मंडल ने प्रो.यू.आर.राव तथा उनकी टोली के विशेषज्ञों से उपग्रह निर्माण के तकनीकी मुद्दे पर विचार विमर्श किया और यह तय पाया गया कि भारत का पहला और बड़ा कृत्रिम उपग्रह सोवियत कास्मोड्रोम से वर्ष 1974-1975 के दौरान अंतरिक्ष में प्रक्षेपित किया जाएगा।

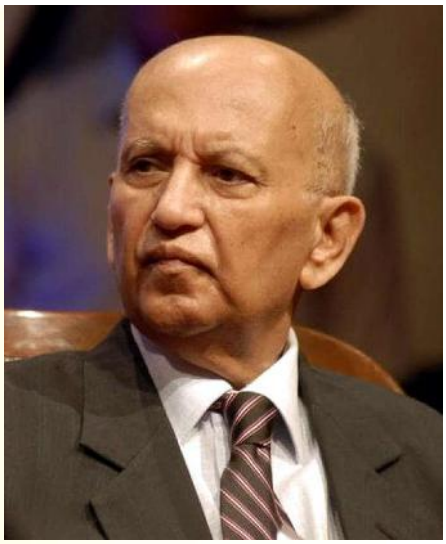

**परियोजना के क्रियान्वयन के दौरान वित्तीय साधनों के आदान-प्रदान का कोई प्रावधान नहीं है। प्रत्येक पक्ष ग्रहण किए गए दायित्वों को निभाने का खर्च स्वयं वहन करेगा। इस समझौते पर टिपण्णी करते हुए बाद में प्रो. मूर्ति ने कहा था - `हम भारतीय वैज्ञानिकों के लिए उस महान दस्तावेज का हर शब्द अदभुत था। उस दस्तावेज में हमारे देश का अंतरिक्षीय भविष्य स्पष्ट था।'**

आर्यभट परियोजना के कार्यान्वयन के लिए प्रो.यू.आर.राव तथा प्रो.वी.एम. कप्तूनियनकोव क्रमशः भारतीय एवं सोवियत टीमों के निर्देशक नियुक्त किये गए। एक माह के ही भीतर आर्यभट के निर्माण की तकनीकी रपट तैयार की गई और मई, 1972 के पहले हफ्ते में प्रो. मेनन के नेतृत्व में भारतीय वैज्ञानिकों का एक प्रतिनिधि मंडल मास्को रवाना हुआ। विभिन्न मुद्दों पर लगभग एक हफ्ते तक बहस हुई और 10 मई, 1972 को प्रो.एम.जी.के. मेनन और अकादमीशियन केलि ने 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन' और 'सोवियत अकादमी आफ साइंसेज' के बीच हुए एक करार पर हस्ताक्षर किए। इस समझौते के अनुसार भारतीय उपग्रह 'आर्यभट' का अंतरिक्ष में छोड़ा जाना तय पाया गया।

## करार के प्रमुख मुददे

उक्त समझौते में स्पष्ट रूप से कहा गया था : 'सोवियत समाजवादी जनतंत्र संघ और भारतीय गणराज्य के बीच शांति, मैत्री और सहयोग संधि के मुताबिक, और शांतिपूर्ण उददेश्यों के लिए बाह्य अंतरिक्ष के उपयोग तथा उस क्षेत्र में अनुसंधान के लिए दोनों देशों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य को सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी तथा भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन दोनों पक्षों के विशेषज्ञों के बीच प्रारंभिक विचार विमर्श के बाद निम्न बातों पर सहमति हुई है।'

- सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी तथा भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन भारत में डिजाइन किए गए और निर्मित वैज्ञानिक भू-उपग्रह का प्रक्षेपण क्रियान्वित करेंगे।
- यह प्रक्षेपण सोवियत संघ के भू-खंड से एक सोवियत प्रक्षेपण यान की सहायता से क्रियान्वित किया जायेगा।
- संयुक्त परियोजना को अंजाम देने के लिए 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन' निम्न दायित्व ग्रहण करता है:
- स्वीकृत तकनीकी डिजाइन के मुताबिक एक निश्चित अवधि के अन्दर एक भू-उपग्रह तैयार करने के लिए आवश्यक कदम उठाना और
- मास्को को उपग्रह, आवश्यक सहायक उपकरण, और तकनीकी दस्तावेज पहुँचाना। सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी को निम्न दायित्व सौंपे जाते हैं :
- सोवियत प्रक्षेपण यान और प्रक्षेपण उपकरण की व्यवस्था करना और संयुक्त परियोजना के क्रियान्वयन के लिए आवश्यक परामर्श और तकनीकी सहयोग करना।
- निर्धारित अवधि के भीतर एक पूर्व निश्चित कक्ष में भू-उपग्रह का पहुँचाया जाना सुनिचित करने के लिए आवश्यक कदम उठाना।
- सोवियत कास्मोड्रोम से भू-उपग्रह के प्रक्षेपण की तैयारी में भारतीय विशेषज्ञों की भागीदारी सुनिश्चित करना।
- मास्को से कस्मोड्रोम के प्रक्षेपण स्थल तक भू-उपग्रह और आवश्यक सहायक उपकरणों की डिलीवरी सुनिश्चित करना ;

इस परियोजना के क्रियान्वयन के

दौरान वित्तीय साधनों के आदान-प्रदान का कोई प्रावधान नहीं है। प्रत्येक पक्ष ग्रहण किए गए दायित्वों को निभाने का खर्च स्वयं वहन करेगा। इस समझौते पर टिपण्णी करते हुए बाद में प्रो. मूर्ति ने कहा था - 'हम भारतीय वैज्ञानिकों के लिए उस महान दस्तावेज का हर शब्द अद्भुत था। उस दस्तावेज में हमारे देश का अंतरिक्षीय भविष्य स्पष्ट था।'

## आर्यभट का निर्माण

निम्न उद्देश्यों की पूर्ति को ध्यान में रखकर आर्यभट परियोजना की आधारशिला रखी गई थी :

- उपग्रह का अभिकल्पन और उसका निर्माण (Designing and Fabrication) तथा उस पर आवश्यक वातावरण परीक्षण पूर्णतः भारतीय भारतीय प्रयासों से किए जाए।
- अंतरिक्ष में अपनी कक्षा में अपने अक्ष पर परिभ्रमण कर रहे उपग्रह की पूर्णरूपेण जांच पड़ताल विधि, क्रमबद्ध तरीके भारतीय वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों द्वारा किया जाए।
- उपग्रह से रेडियो संपर्कों द्वारा आदान प्रदान हेतु आवश्यक ग्राउंड स्टेशनों का निर्माण, देश के भावी कार्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए अत्यंत सतर्कता से भारतीय विशेषज्ञों द्वारा किया जाय।
- देश की विभिन्न समस्याओं को ध्यान में रखते हुए उपग्रहों के निर्माण हेतु उपयुक्तगूढ़ तकनीकी आधारों का क्रमशः विकास किया जाए।
- उपग्रह निर्माण के प्रथम प्रयास में भारतीय वैज्ञानिकों को अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान करने का अवसर प्रदान किया जाए।
- जब आर्यभट के प्रक्षेपण का समझौता रूस से हो गया तो प्रो. राव ने भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के अध्यक्ष प्रो. सतीश धवन (अब 'इसरो की बागडोर प्रो. धवन के हाथों में थी) के सामने आर्यभट परियोजना की रूपरेखा प्रस्तुत की। प्रो. धवन ने अंतर्राष्ट्रीय समझौते को मद्देनज़र रखते हुए प्रो. राव को उक्त परियोजना की एक रपट तैयार करने को कहा। प्रो. राव ने शीघ्र ही रपट तैयार कर दी और अगस्त 1972 में 'अन्तरिक्ष आयोग' के समक्ष स्वीकृति के लिए उसे प्रस्तुत किया गया। इस रपट में परियोजना के विभिन्न पक्षों पर विचार किया गया था। उसकी संक्षिप्त रूपरेखा इस प्रकार थी।
- उपग्रह की तकनीकी प्रणालियों का संक्षिप्त विवरण।
- विभिन्न प्रयोगशालाओं की स्थापना हेतु लगभग 20,000 वर्ग फुट तथा स्वच्छ कक्ष हेतु 1000 वर्ग फुट स्थान की आवश्यकता का समुचित विश्लेषण, कुछ तकनीकी कारणों से भारतीय उपग्रह परियोजना की स्थापना हेतु बंगलौर का चयन।
- तीन करोड़ राशि की आवश्यकता का सिलसिलेवार विश्लेषण।
- लगभग 150 तकनीकी विशेषज्ञों तथा अन्य कर्मचारियों की आवश्यकता का पूरा ब्यौरा।
- आवश्यक नई प्रयोगशालाओं, विशेष प्रकार की परीक्षण सुविधाओं की स्थापना का विवरण।
- परियोजना के कार्यक्रम का पूर्ण विवरण।
- उपकरणों यंत्रों का विवरण।

**11 सितंबर, 1972 को प्रातः सवा 7 बजे परियोजना के श्रीगणेश की एक अनौपचारिक उद्घाटन सभा आयोजित की गई। इस अवसर पर लम्बे चौड़े व्याख्यान नहीं हुए अपितु उपस्थित थोड़े से वैज्ञानिकों -प्रो. राव, श्री वेलोड़ी, श्री एच एस मूर्ति, श्री टी.एन शेषन, श्री पारीख, डॉ. शिव प्रसाद कोस्टा ने मिलकर संकल्प किया कि `इन कुटीरों में हम अपना प्यारा नीलवर्ण उपग्रह तैयार करेंगे, और उपग्रह तकनीक की ऐतिहासिक क्रांति करके दिखाएंगे।'**

अगस्त 1972 में ही अंतरिक्ष आयोग ने आर्यभट परियोजना की रपट को स्वीकृति दे दी और साथ ही परियोजना को शीघ्र ही लागू किये जाने के आदेश भी। तकनीकी कारणों को ध्यान में रखकर पीन्या, बंगलौर में भारतीय उपग्रह परियोजना को साकार करने का निश्चय किया गया। सस्ती जमीन लेकर भवन, प्रयोगशालाएं स्थापित की गईं और कार्य आरंभ हुआ।

11 सितंबर, 1972 को प्रातः सवा 7 बजे परियोजना के श्रीगणेश की एक अनौपचारिक उद्घाटन सभा आयोजित की गई। इस अवसर पर लम्बे चौड़े व्याख्यान नहीं हुए अपितु उपस्थित थोड़े से वैज्ञानिकों -प्रो. राव, श्री वेलोड़ी, श्री एच एस मूर्ति, श्री टी.एन शेषन, श्री पारीख, डॉ. शिव प्रसाद कोस्टा ने मिलकर संकल्प किया कि 'इन कुटीरों में हम अपना प्यारा नीलवर्ण उपग्रह तैयार करेंगे .... और उपग्रह तकनीक की ऐतिहासिक क्रांति करके दिखाएंगे।'

शनैः शनैः परियोजना के कार्य संपादित होते रहे। उपकरण, कलपुर्जे जरूरत की और चीजें मंगाई गईं, आवास और प्रयोगशालाओं का निर्माण बदस्तूर जारी रहा। विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र से लगभग 60 इंजीनियरों और वैज्ञानिकों को यहां पर स्थानांतरित किया गया। देश के प्रमुख दैनिक पत्रों में इंजीनियरों, वैज्ञानिकों एवं तकनीशियनों की आवश्यकता के विज्ञापन निकाले गए। तकनीकी संस्थानों से सीधे संपर्क साधकर

मेधावी प्रतिभाओं को यहाँ लाया गया। लगभग 50 इंटरव्यू बोर्डों द्वारा 250 तकनीकी विशेषज्ञों का चुनाव हुआ जो उपग्रह परियोजनाओं में शामिल किये गए। परियोजना के अंतिम चरण में कर्मचारियों की संख्या लगभग 370 थी।

9 अगस्त, 1972 को इंडियन इंस्टिटयूट ऑफ साइंस बंगलौर में एक मीटिंग बुलाई गई। इसमें देश की विभिन्न प्रयोगशालाओं और विश्वविद्यालयों, वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों के प्रख्यात विशेषज्ञों, शोधकर्ताओं को आमंत्रित किया गया था। मीटिंग का उद्देश्य था उपग्रह के तकनीकी डिजाइन को अंतिम रूप देना। विस्तृत विचार विमर्श के बाद उपग्रह की डिजाइन को अंतिम रूप दिया गया और आए हुए विशेषज्ञों ने इस भावी परियोजना को पूरा करने में अपना भरपूर सहयोग देने का वायदा भी किया।

और इस तरह बंगलौर के निकट पीन्या नामक स्थान पर 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के लगभग 400 युवा वैज्ञानिकों की मेधा और लगन के परिणामस्वरूप लगभग 26 माह की अवधि और 5 करोड़ रुपये की लागत से 'आर्यभट' का निर्माण संभव हुआ।

यद्यपि आर्यभट के निर्माण का पूरा दायित्व भारतीय उपग्रह परियोजना, बंगलौर का था फिर भी सोवियत संघ (सौर सेल और गैस सिलेंडर के लिए) तथा अन्य कई भारतीय संस्थानों- हिन्दुस्तान एरोनोटिक्स लिमिटेड (उपग्रह का ढांचा बनाने के लिए) कंट्रोल रेट आफ इंस्पेक्शन इलेक्ट्रानिक्स (विभिन्न प्रकार के निरीक्षणों के लिए), नेशनल एरोनाटिक्स लेबोरेट्री, भारत एरोनाटिक्स, सेन्ट्रल मशीन टूल्स इंस्टीट्यूट, इंडियन टेलीफोन इंडस्ट्रीज (विभिन्न प्रकार के इलेक्ट्रानिक यांत्रिक उपकरणों हेतु) का सहयोग सराहनीय है, जिनके महत्वपूर्ण योगदानों के बल पर यह योजना सफल हुई।

## उपग्रह की मास्को रवानगी और प्रक्षेपण

रूसी कास्मोड्रोम में 'आर्यभट के परीक्षण हेतु बहुत से यंत्रों और उपकरणों की जरूरत थी। अतः इनको प्लाई वुड की पेटियों में बड़ी सावधानी से पैक किया और लगभग 20 टन वजन की 100 पेटियों को बंगलौर से मास्को एयरफोर्स के ए एन-12 भार वाहक जहाज द्वारा 17 मार्च को मास्को रवाना किया गया।

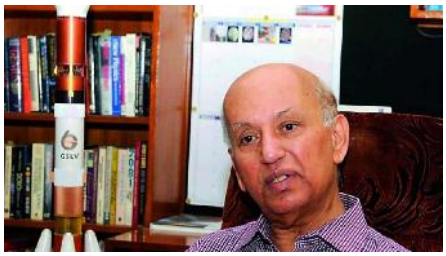

**ठीक 14 घंटे, 37 मिनट, 5 सेकंड के बाद रुसी कास्मोड्रोम में आर्यभट के संकेत मिले और फिर समय के साथ बियर्स लेक, बंगलौर तथा श्रीहरिकोटा के स्टेशनों को आर्यभट के संकेत मिलने लगे। भारतीय और रूसी विज्ञानियों के दलों में खुशियों की लहर उमड़ पड़ी। आकाशवाणी ने सायं 5 बजे समाचार प्रसारित किया : `भारत ने पहला उपग्रह `आर्यभट' सोवियत रॉकेट द्वारा ठीक 12 बजकर 59 मिनट,11 सेकंड पर छोड़ा, जो पृथ्वी का एक चक्कर 96.44 मिनट में लगा रहा है।'**

**वस्तुतः आर्यभट के प्रक्षेपण से भारत ने असली मायने में अंतरिक्ष युग में प्रवेश किया। भारत अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में विश्व का 11वां और प्रथम विकासशील राष्ट्र बन गया। देश के हर कोने से `भारतीय उपग्रह परियोजना' टीम को बधाइयों के सन्देश आने लगे।**

प्रक्षेपण से एक मास पूर्व लगभग 45 वैज्ञानिक एवं इंजीनियर यहाँ से सोवियत कास्मोड्रोम जा चुके थे। जब आर्यभट का माडल और सम्बद्ध उपकरण रूस पहुँच गए तो सर्वप्रथम 'आर्यभट' को निकाल कर उसका परीक्षण किया गया। सौभाग्यवश आर्यभट में कोई टूट-फूट नहीं हुई थी। फिर आर्यभट को तीन हिस्सों -बाह्य कवच, धरातल कवच और डेक-प्लेट में अलग किया गया। सौर सेलों को निकाल कर उनका परीक्षण किया गया। उपग्रह के अन्य अवयवों की बड़ी बारीकी से जाँच की गई और सब कुछ सही-सलामत पाए जाने पर उपग्रह के तीनों अवयवों को फिर से मिलाया गया। कम्प्यूटर की मदद से उसकी अंतिम जांच पड़ताल की गई। अब उपग्रह प्रक्षेपण के लिए तैयार था।

13 अप्रैल 1974 को सोवियत राकेट एक रेलगाड़ी में टेक्नॉलॉजिकल पोजीशन पर लाया गया गया। उसकी जाँच की गई। उपयुक्त पाए जाने पर 'आर्यभट' को उससे सम्बद्ध कर दिया गया और अब राकेट को प्रक्षेपण टावर पर ले जाया गया। फिर राकेट में ईंधन भरा जाने लगा।

सोवियत कास्मोड्रोम में सोवियत और भारतीय तकनीकी टोलियों ने आर्यभट के सभी परीक्षणों का विश्लेषण किया और 16 अप्रैल 1974 को संयुक्त रूप से यह निर्णय किया गया कि अब 'आर्यभट को किसी भी समय अंतरिक्ष में छोड़ा जा सकता है। दोनों टोलियों ने प्रक्षेपण कमीशन (प्रो. सतीश धवन, अकादमीशियन पेत्रोव, प्रो.यू.आर.राव, प्रो. कफ्तूनियन कोव ) को अपनी रपट दे दी। 17 अप्रैल को प्रक्षेपण कमीशन की बैठक हुई और यह निर्णय लिया गया की 19 अप्रैल को भारतीय समयानुसार ठीक 1 बजे राकेट द्वारा 'आर्यभट' को अंतरिक्ष में प्रक्षेपित किया जायेगा।

आर्यभट का प्रक्षेपण भारतीय और सोवियत संघ दोनों ने अभी तक एकदम गोपनीय रखा था। 17 अप्रैल से ही काउंट डाउन शुरू हो गई।

## आर्यभट का सफल प्रक्षेपण

19 अप्रैल, 1975 का दिन। बियर्स लेक के पास स्थित सोवियत कास्मोड्रोम। काउंट डाउन....

दस...नौ...आठ...तीन...दो...एक... और आग उगलता हुआ, तेज गड़गड़ाहट के साथ रुसी राकेट 'इंटर कास्मॉस' भारत के प्रथम कृत्रिम उपग्रह 'आर्यभट' को लेकर उड़ चला अंतरिक्ष की ओर। उस समय भारतीय समयानुसार ठीक 12 बज कर 52 मिनट और 59.11 सेकंड हुए थे। सोवियत कास्मोड्रोम में उपस्थित भारतीय राजदूत डी.पी.धर, प्रो. सतीश धवन, अकादमीशियन पेत्रोव एवं कई अन्य भारतीय-सोवियत विशेषज्ञ रॉकेट को निहार रहे थे। कुछ-कुछ ऐसा ही हाल इधर भी था। दिलों की धड़कन थामे वैज्ञानिक गण भारत के ग्राउंड स्टेशनों-श्रीहरिकोटा और बंगलौर - में बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहे थे कि कब यह शुभ समाचार मिलता है कि हमारा पहला उपग्रह धरती की कक्षा में स्थापित हो गया। ठीक 1 बजकर 28 मिनट एवं 59 सेकंड पर आर्यभट ने इंडोनेशिया के ऊपर पृथ्वी की परिक्रमा हेतु अपनी कक्षा में प्रवेश किया। 360 किलोग्राम भार वाला उपग्रह 600 किलोमीटर की ऊँचाई पर अपनी पूर्व निर्धारित कक्षा में स्थापित हो गया।

ठीक 14 घंटे, 37 मिनट, 5 सेकंड के बाद रुसी कास्मोड्रोम में आर्यभट के संकेत मिले और फिर समय के साथ बियर्स लेक, बंगलौर तथा श्रीहरिकोटा के स्टेशनों को आर्यभट के संकेत मिलने लगे। भारतीय और रूसी विज्ञानियों के दलों में खुशियों की लहर उमड़ पड़ी। आकाशवाणी ने सायं 5 बजे समाचार प्रसारित किया : 'भारत ने पहला उपग्रह 'आर्यभट' सोवियत रॉकेट द्वारा ठीक 12 बजकर 59 मिनट, 11 सेकंड पर छोड़ा, जो पृथ्वी का एक चक्कर 96.44 मिनट में लगा रहा है।'

वस्तुतः आर्यभट के प्रक्षेपण से भारत ने असली मायने में अंतरिक्ष युग में प्रवेश किया। भारत अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में विश्व का 11वां और प्रथम विकासशील राष्ट्र बन गया। देश के हर कोने से 'भारतीय उपग्रह परियोजना' टीम को बधाइयों के सन्देश आने लगे।

राष्ट्रपति ने इस प्रयास को देश और भारतीय विज्ञान की गौरवपूर्ण उपलब्धि बताया। उपग्रह की सक्रिय कार्यकारी अवधि 6 मास की थी और इसके जरिये तीन महत्वपूर्ण वैज्ञानिक प्रयोग करने थे। लगभग 360 किलोग्राम वजन

आर्यभट की सफलता लगभग 400 व्यक्तियों की कड़ी मेहनत का सुखद परिणाम थी। इनमें लगभग 250 वैज्ञानिक एवं इंजीनियर थे जिनकी आयु 30 से 40 वर्ष के आस पास की थी। हमारे ये युवा विज्ञानी, तकनीकीविद् अंतरिक्ष विज्ञान की जटिल समस्याओं को समझने, उनका विश्लेषण करने में पूर्ण समर्थ थे। आर्यभट की सफलता ने भावी अंतरिक्ष कार्यक्रमों का मार्ग प्रशस्त कर दिया। आर्यभट से उपग्रह प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रवेश कर भारतीय इंजीनियरों एवं वैज्ञानिकों ने अपना ध्यान उपग्रहों के व्यावहारिक उपयोगों की ओर केन्द्रित किया।

एवं 26 चपटे हिस्सों वाले आर्यभट के जीवन पोषक तत्वों के संचालन हेतु 45 वाट विद्युत की आवश्यकता थी, जिसकी पूर्ति सौर बैटरियों द्वारा उत्पन्न विद्युत से की जा रही थी। उपग्रह में टाइटेनियम से बने 6 गैस सिलिंडर रखे गए थे। इससे घनीभूत नाइट्रोजन विभिन्न दिशाओं में निकलती थी, जिससे उपग्रह अपनी धुरी पर घूमता था। यह गैस 6 माह तक की अवधि के लिए पर्याप्त थी और इतना ही उपग्रह का जीवन था। आर्यभट पूर्ण रूप से वैज्ञानिक उपग्रह था, जिसके द्वारा एक्स किरण खगोलकी, वायु विज्ञान तथा सौर भौतिकी संबंधी तीन वैज्ञानिक प्रयोग किए जाने थे।

'एक्स-किरण खगोलकी प्रयोग' का आयोजन भारतीय उपग्रह केंद्र के निदेशक प्रो. यू.आर. राव तथा डॉ. कस्तूरी रंगन एवं उनके सहयोगियों द्वारा किया गया था। इस प्रयोग द्वारा आकाश गंगा तथा दूसरे तारामंडलों के तारों में एक्स-रे विकिरण की खोज तथा उनकी माप की जानी थी।

'सौर भौतिकी प्रयोग' का आयोजन टाटा आधारभूत अनुसंधान संस्थान, बम्बई के प्रो. आर.आर. डेनियल, डॉ.पी.जे. लवकरे ने किया था। इस प्रयोग का उद्देश्यतीव्र सौर-गतिविधियों के समय उर्जावान न्यूट्रान तथा गामा किरणों की खोज करना था।

'वायु विज्ञान प्रयोग' का प्रयोजन भौतिक अनुसंधान शाला, अहमदाबाद के प्रो. सत्य प्रकाश, डॉ. सुब्बाराव राव एवं उनके सहयोगियों ने किया था। इस प्रयोग में आयन मंडल के अति तापीय इलेक्ट्रॉनों के उर्जा वर्णक्रम का अध्ययन एवं रात के समय आसमान में बिखरे हुए लायमन अल्फा विकिरण की जानकारी प्राप्त करनी थी। इस प्रायोगिक उपग्रह के विकास, निर्माण एवं प्रक्षेपण से भारतीय वैज्ञानिकों, इंजीनियरों को उपग्रह तकनीक के विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट रूप से समझने का अवसर मिला है।

आर्यभट की सफलता लगभग 400 व्यक्तियों की कड़ी मेहनत का सुखद परिणाम थी। इनमें लगभग 250 वैज्ञानिक एवं इंजीनियर थे जिनकी आयु 30 से 40 वर्ष के आस पास की थी। हमारे ये युवा विज्ञानी, तकनीकीविद् अंतरिक्ष विज्ञान की जटिल समस्याओं को समझने, उनका विश्लेषण करने में पूर्ण समर्थ थे। आर्यभट की सफलता ने भावी अंतरिक्ष कार्यक्रमों का मार्ग प्रशस्त कर दिया। आर्यभट से उपग्रह प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रवेश कर भारतीय इंजीनियरों एवं वैज्ञानिकों ने अपना ध्यान उपग्रहों के व्यावहारिक उपयोगों की ओर केन्द्रित किया।

अंतरिक्ष में सुचारू रूप से परिभ्रमण करने वाले इस उपग्रह के निर्माण से उड़ान तक के सभी तकनीकी पक्षों यथा संरचना, ताप नियंत्रण, विद्युत शक्ति उत्पादन एवं वितरण, टेलीमीटरी, टेलीकमांड, कम्युनिकेशन, संवेदक यंत्र, परिभ्रमण प्रणाली आदि के विकसित करने का सम्यक ज्ञान एवं अनुभव मिला, जिससे नई-नई संभावनाओं के द्वार स्वतः खुल गए।

**sdprasad24oct@yahoo.com**

विश्व क्षय रोग दिवस, 24 मार्च पर विशेष

# क्षय रोग

## आज भी एक चुनौती

डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र

*डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान में पीएच-डी. की उपाधि प्राप्त की। आप टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान मुंबई के होमी भाभा विज्ञान केन्द्र में एसोसिएट प्रोफेसर हैं। लोकप्रिय विज्ञान लेखक के रूप में आपकी अपार ख्याति है जोकि हिन्दी में आपके व्यापक लेखन से निर्मित हुई है। आपके 250 से अधिक लेख तथा 22 पुस्तकें प्रकाशित हैं। राजभाषा गौरव पुरस्कार, होमी जहाँगीर भाभा स्वर्ण पुरस्कार, शताब्दी सम्मान, राजभाषा भूषण पुरस्कार, इस्वा सम्मान सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित डॉ.मिश्र मुंबई में निवास करते हैं।*

क्षय रोग यानी ट्यूबरकुलोसिस (टीबी) का व्यापक प्रसार आज पूरे विश्व में चिन्ता का विषय बन गया है। दुनिया में हर साल लाखों लोग टीबी की बीमारी से अपनी जान गवाँ देते हैं। क्षय रोग के विषय में वैश्विक स्तर पर जानकारी एवं जागरूकता फैलाने के उद्देश्य से हर वर्ष 24 मार्च को "विश्व क्षय रोग दिवस" के रूप में मनाया जाता है। क्षय रोग एक जानलेवा संक्रामक बीमारी है। इसे तपेदिक, यक्ष्मा अथवा राजयक्ष्मा भी कहा जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2016 में कुल 1 करोड़ 4 लाख लोग टीबी की चपेट में आये। इनमें से लगभग 18 लाख लोगों की मौत हो गई। भारत में यह बीमारी बहुत ही भयावह तरीके से फैली हुई है। पूरी दुनिया के क्षय रोगियों में लगभग 27 प्रतिशत भारत में हैं। देश में क्षय रोग के व्यापक प्रसार का सबसे बड़ा कारण बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, जनचेतना की कमी, अशिक्षा, लोगों में समुचित साफ-सफाई की आदत का न होना है। विश्व क्षय रोग दिवस मनाने के पीछे उद्देश्य यह है कि लोगों को इस बीमारी के विषय में जागरूक किया जाए तथा इस रोग की रोकथाम के लिए जरूरी कदम उठाए जाएँ। विश्व क्षय रोग दिवस को विश्व स्वास्थ्य संगठन से व्यापक समर्थन मिलता है।

एक समय था जब टीबी की बीमारी लाइलाज थी। टीबी हो जाने का मतलब होता था कि जीवन की संध्या नजदीक है। इसका कोई कारगर इलाज नहीं था। तब ऐन्टीबायोटिक दवाओं का आविष्कार नहीं हुआ था। हाँ, टीबी हो जाने पर खानपान तथा आबोहवा दुरुस्त रखने से मरीज का जीवनकाल थोड़ा बढ़ जाता था। पुराने जमाने में अमीर लोग टीबी होने पर पेरिस, जेनेवा जैसे ठंडे स्थानों पर चले जाते थे जिससे रोग का संक्रमण थोड़ा थम जाता था। खानपान पर ध्यान देने से व्यक्ति की सेहत सुधर जाती थी। इससे मरीज की रोगप्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती थी। यानी बीमारी से लड़ने की ताकत मिल जाती थी। इससे टीबी के जीवाणुओं से लड़ाई की मियाद बढ़ जाती थी। दूसरे शब्दों में, बीमारी से जद्दोजहद थोड़ा लम्बा खिंच जाता था। लेकिन अंततः बीमारी ही जीतती थी। फिर भी रोगी को उम्र थोड़ी बढ़ जाती थी। वे लोग जो विदेश जाने की हैसियत नहीं रखते थे, वे अकसर देश में शिमला, मसूरी, नैनीताल जैसे स्थानों पर जाकर सेहत बनाते थे। नैनीताल के पास रानीखेत रोड पर भवाली में एक जाना माना सेहतगाह (सैनेटोरियम) हुआ करता था जहाँ टीबी के मरीज प्रायः स्वास्थ्यलाभ के लिए जाते थे। लेकिन आज स्थितियां बदल चुकी हैं। यह बीमारी बिलकुल ठीक हो सकती है बशर्ते कि नियमित तौर पर दवा ली जाए तथा उसका कोर्स पूरा किया जाए।

### टीबी क्या है?

टीबी एक संक्रामक रोग है। यह जीवाणु (बैक्टीरिया) की वजह से होता है। सन् 1882 में जर्मनी के चिकित्सक तथा सूक्ष्मरोगविज्ञानी डॉ. रॉबर्ट कॉख (Dr. Robert Koch) ने क्षय रोग के जीवाणु, माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस की पहचान की थी। इस महत्वपूर्ण अनुसंधान के लिए उन्हें सन् 1905 में चिकित्सा विज्ञान के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। टीबी का बैक्टीरिया शरीर के किसी भी अंग को प्रभावित कर सकता है। हालाँकि यह ज्यादातर फेफड़ों को संक्रमित करता है। इसके अलावा आंतों, मस्तिष्क, हड्डियों, जोड़ों, गुर्दे, त्वचा तथा हृदय भी टीबी से

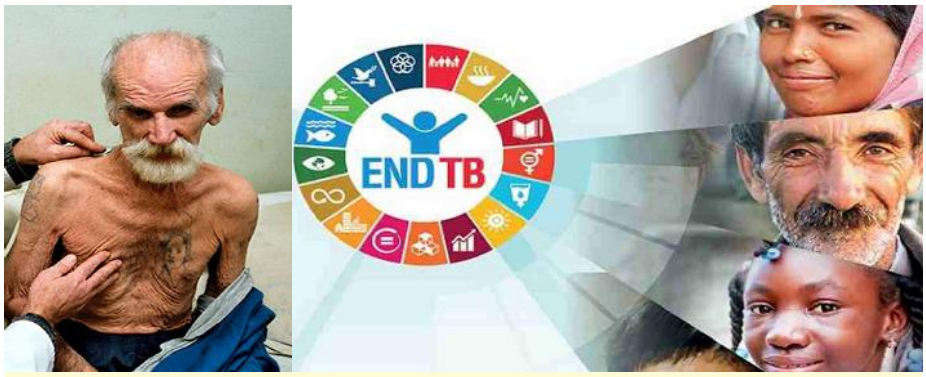


**पेट के क्षय रोग के मरीज को सामान्य रूप से होने वाली पेट की समस्याएं ही होती हैं जैसे बार-बार दस्त लगना, पेट में दर्द होना, कब्ज इत्यादि। जब तक पेट के टी.बी के बारे में पता चलता है, तब तक पेट में गांठें पड़ चुकी होती हैं। इसलिए पेट सम्बन्धी किसी भी समस्या को गंभीरता से लेना चाहिए। क्षय रोग के लक्षण दिखाई देने पर इसका समुचित इलाज कराना चाहिए।**

संक्रमित हो सकते हैं। टी.बी से संक्रमित व्यक्ति धीरे-धीरे कमजोर होता जाता है। इससे उसे कई दूसरी गंभीर बीमारियां होने का खतरा रहता है। टी.बी. की बीमारी अकसर एड्स पीड़ित, मधुमेहग्रस्त और कमजोर लोगों को अधिक होती है।

टीबी का इलाज बिलकुल संभव है। हाँ, इसके लिए एन्टीबायोटिक दवाइयों का कोर्स पूरा करना पड़ता है। लेकिन किन्हीं कारणों से यदि मरीज ने दवाइयों का कोर्स पूरा नहीं किया तो उसके अंदर मौजूद जीवाणुओं का पूरी तरह खात्मा नहीं होता तथा बाद में चलकर वे दवाइयों के खिलाफ प्रतिरोध (रेजिस्टेंस) पैदा कर लेते हैं। फिर एन्टीबायोटिक दवाएं इन पर बेअसर हो जाती हैं। इस जटिल स्थिति को मल्टी ड्रग रेजिस्टेंट ट्यूबरकुलोसिस (एमडीआर टी.बी.) कहते हैं। इस बीमारी से दुनियाभर के डॉक्टर वाकई बहुत चिंतित हैं। हमारे देश में अकसर देखा गया है कि मरीज पूरा इलाज नहीं कराते। थोड़ा आराम होते ही उन्हें लगता है कि वे चंगा हो गये हैं। वे दवा लेना बंद कर देते हैं। इससे रोगियों में एमडीआर टी.बी। के मामले बढ़ रहे हैं। भारत में टीबी के तेजी से पैर पसारने का एक मुख्य कारण इस बीमारी के लिए लोगों सचेत ना होना, और इसे शुरूआती दौर में गंभीरता से न लेना भी है।

## क्षय रोग (टीबी) के प्रकार

● **फुफ्फुसीय क्षय रोग** - फुफ्फुसीय क्षय रोग में व्यक्ति के फेफड़े टीबी के जीवाणु से संक्रमित होते हैं। इसे पल्मोनरी टीबी भी कहा जाता है। सभी टीबी में यह सबसे आम तौर पर मिलने वाली टीबी की बीमारी है। यह किसी भी उम्र के व्यक्ति को हो सकती है। साथ ही किसी भी पेशे के इंसान को इसका संक्रमण हो सकता है। अलग-अलग व्यक्तियों में फुफ्फुसीय क्षय रोग के लक्षण अलग-अलग पाए जाते हैं। इनमें कुछ सामान्य लक्षण हैं, सांस तेज चलना, सिरदर्द होना या नाड़ी तेज चलना, इत्यादि।

● **पेट का क्षय रोग** - दरअसल पेट के क्षय रोग के मरीज को सामान्य रूप से होने वाली पेट की समस्याएं ही होती हैं जैसे बार-बार दस्त लगना, पेट में दर्द होना, कब्ज इत्यादि। जब तक पेट के टी.बी के बारे में पता चलता है, तब तक पेट में गांठें पड़ चुकी होती हैं। इसलिए पेट सम्बन्धी किसी भी समस्या को गंभीरता से लेना चाहिए। क्षय रोग के लक्षण दिखाई देने पर इसका समुचित इलाज कराना चाहिए।

● **हड्डी का क्षय रोग** - हड्डी में होने वाले क्षय रोग के कारण हड्डियों में जगह-जगह घाव हो जाते हैं जो कि इलाज के बाद भी आसानी से ठीक नहीं होते। शरीर में जगह-जगह फोड़े-फुंसियां होना भी हड्डी के क्षय रोग का लक्षण है।

## टीबी के सामान्य लक्षण

टीबी के मरीजों में प्रारम्भिक अवस्था में प्रायः निम्नलिखित लक्षण दिखाई देते है जैसे कि -

- दो सप्ताह या उससे ज्यादा दिन तक लगातार खांसी - मरीज को दो हफ्ते से ज्यादा समय तक खांसी आती रहती है। कफ सिरप तथा अन्य कफ सम्बन्धी दवाइयों के सेवन से भी खांसी ठीक नहीं होती। खांसी के दौरान यदि कफ के साथ मुंह से खून आता है तो यह टीबी का लक्षण हो सकता है।
- भूख कम लगना और वजन का कम होना - टीबी के मरीजों में अक्सर देखा जाता है कि उन्हें भूख कम लगती है जिसके कारण उनका वजन तेजी से घटता है। टीबी के मरीज बेहद कमजोर हो जाते हैं।
- ठंड लग कर पसीने के साथ बुखार आना - टीबी का संक्रमण फैलने के बाद रोगी को अक्सर बुखार रहता है तथा ठंड के साथ-साथ पसीना भी आता है।
- कई लोगों में शरीर में गांठें बनना - टीबी के लक्षणों में यह भी देखा जाता है कि रोगी के शरीर पर बहुत सी गांठें बनने लगती हैं।

## टीबी के जाँच के तरीके

शरीर के जिस हिस्से की टीबी है, उसके मुताबिक जांच कराना जरूरी होता है। फेफड़ों की टीबी के लिए बलगम की जांच की जाती है। सरकारी अस्पतालों और डॉट्स सेंटर पर यह जाँच निःशुल्क की जाती है। बलगम की जाँच दो दिन लगातार की जाती है। ध्यान रहे, थूक नहीं, बल्कि बलगम की जांच की जाती है। अच्छी तरह खांस कर ही बलगम को जाँच के लिए दिया जाना चाहिए। थूक की जाँच होगी तो टीबी पकड़ में नहीं आएगी। अगर बलगम में टीबी पकड़ नहीं आती तो एएफबी कल्चर कराना होता है। लेकिन इनकी रिपोर्ट छः हफ्ते में आती है। ऐसे में अब जीन एक्सपर्ट जांच की जाती है, जिसकी रिपोर्ट चार घंटे में ही आ जाती है। इस जाँच में यह भी पता चल जाता है कि किस स्तर की टीबी है, और दवा का असर कितना होगा। किडनी की टीबी के लिए यूरीन कल्चर टेस्ट किया जाता है। गर्भाशय की टीबी के लिए सर्वाइकल स्वैब लेकर जाँच की जाती है। वैसे तो टीबी की जाँच करने के कई तरीके होते हैं, जैसे- छाती का एक्स-रे, बलगम की जाँच, स्किन टेस्ट, आदि। लेकिन आधुनिक तकनीक के माध्यम से आईजीएम हीमोग्लोबिन जाँच कर भी टीबी का पता लगाया जा सकता है।

## टीबी से बचाव के तरीके

टीबी से बचाव के लिए निम्नलिखित तरीके

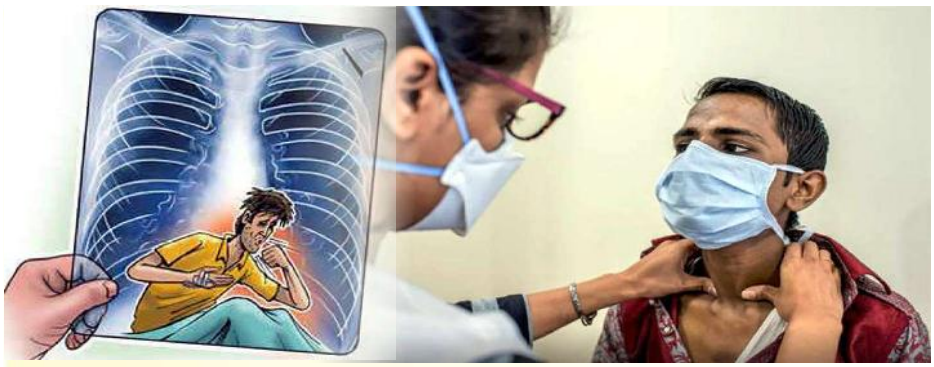

अपनाएं जा सकते है जैसे कि -

- बीसीजी का टीका लगवाकर टीबी से बचा जा सकता है।
- टीबी के रोगी से समुचित दूरी बना कर रखें। ध्यान रहे, यह एक संक्रामक रोग है।
- टीबी के मरीज को मास्क पहनना चाहिए ताकि उसके छींकने, या फिर खांसने से यह रोग दूसरों को न फैले।
- मरीज को इधर-उधर नहीं, बल्कि किसी पीकदान में ही थूकना चाहिए।
- मरीज को सार्वजनिक वस्तुओं का इस्तेमाल कम से कम करना चाहिए जिससे कि अन्य लोग इसकी चपेट में न आएं।

## टीबी से राहत के लिए कुछ घरेलू उपाय

जैसा कि हम जानते हैं, टीबी एक संक्रामक बीमारी है। यह किसी को भी हो सकती है। टीबी की बीमारी में कुछ घरेलू नुस्खे भी लाभकारी होते हैं। इन नुस्खों से टीबी मरीजों को राहत मिलती है। लेकिन ध्यान रहे, ये नुस्खे टीबी का उपचार कत्तई नहीं हैं।

- रोज सुबह-शाम खाली पेट आधा कप प्याज का रस एक चुटकी हींग डाल कर पिएं।
- एक पका केला लें। उसे मसलकर उसमें एक कप नारियल पानी, आधा कप दही और एक चम्मच शहद मिलाएं। इसे दिन में दो बार लें। इससे प्रतिरक्षा-तंत्र मजबूत होता है।
- संतरे के ताजे जूस में थोड़ा-सा नमक और शहद मिलाकर रोजाना सुबह-शाम पीएं। इससे प्रतिरक्षा-तंत्र मजबूत होता है तथा फेफड़ों से बलगम साफ करने में भी मदद मिलती है।
- टीबी में शरीफा बेहद फायदेमंद है। शरीफे का गूदा निकालकर खाने की सलाह दी जाती है।
- अखरोट के सेवन से टीबी के मरीजों को ताकत मिलती है। इससे रोगी के जल्दी ठीक होने में मदद मिलती है।
- शहद, मिश्री, गाय का घी, तीनों को अच्छे से मिला लें। मरीज को 6-6 ग्राम मात्रा दिन में कई बार चटाएं। साथ में गाय या बकरी का दूध पिलाएं। इससे कफ के कारण होने खांसी से काफी राहत मिलती है।

## क्षय रोग (टीबी) से संबंधी मिथक तथा भ्रांतियां

क्षय रोग से सम्बन्धी बहुत सारे अंधविश्वास समाज में व्याप्त हैं। इसे लेकर बहुत सारी भ्रांतियां हैं। मसलन कि क्षय रोग आनुवंशिक होता है, जो कि बिल्कुल निराधार तथा गलत है। हाँ, क्षय रोग संक्रामक होता है। यह रोगी के खांसने तथा छींकने से फैलता है। इसलिए मरीज के सम्पर्क में रहने वाले व्यक्तियों को सावधानी बरतनी चाहिए। कुछ लोगों को भ्रम होता है कि चूंकि उनमें टीबी का कोई लक्षण नहीं है इसलिए उन्हें टीबी नहीं है। कई बार लक्षण न होने पर भी जांच में टीबी पायी जाती है। इस स्थिति को छुपा हुआ टीबी कहा जाता है। इन परिस्थितियों में व्यक्ति को काफी सचेत रहने की आवश्कता होती है जिससे कि छुपा हुआ टीबी का रोग आगे चलकर सक्रिय टीबी में तब्दील न हो सके।

## डॉट्स

डॉट्स (DOTS) यानी 'डायरेक्टली ऑब्जर्व्ड ट्रीटमेंट-शॉर्ट कोर्स' टीबी के इलाज का अभियान है। इसमें टीबी की मुफ्त जाँच से लेकर मुफ्त इलाज तक शामिल है। इस अभियान में स्वास्थ्यकर्मी मरीज को अपने सामने दवा देते हैं ताकि मरीज दवा लेना न भूले। वे मरीज और उसके परिवार को मशविरा भी देते हैं। साथ ही, इलाज के बाद भी मरीज पर निगाह रखते हैं। ऐसा वे यह सुनिश्चित करने के लिए करते हैं कि मरीज में टीबी के लक्षण कहीं फिर से तो प्रकट नहीं हो रहे हैं। डॉट्स में 95 फीसदी तक इलाज पूर्णतः सफल होता है। टीबी फैलाने पर सजा का भी प्रावधान है। भारतीय दंड संहिता की धारा 269 और 270 के अनुसार टीबी का ठीक से पूरा इलाज न कराने, और इसे समाज में दूसरों तक फैलाने के लिए छः महीने तक की सजा का प्रावधान है।

आज की जीवन-शैली में लोग अपने कामों में बहुत व्यस्त रहते हैं। जीवन की भागदौड़ में रोजमर्रा की दिनचर्या प्रभावित होती है। जीवन में सफलता तथा मुकाम हासिल करने की दौड़ के चलते लोग जीवनशैली से समझौता कर लेते हैं। इन हालात में सबसे ज्यादा उपेक्षित होता है उनका स्वास्थ्य। आजकल युवा पीढी सेहत को लेकर उतनी सजग नहीं दिखती है। शरीर पर लगातार क्षमता से ज्यादा बोझ पड़ने और नुकसानदायक खाद्यपदार्थों (जंक फूड) के सेवन करने की बढ़ती प्रवृत्ति के चलते युवाओं के शरीर की प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। ऐसे में टीबी जैसे रोग की गिरफ्त में आ जाने की संभावना कई गुना बढ जाती हैं। खास कर के बड़े शहरों के ऐसे युवाओं में, जो बेहद प्रतिस्पर्धात्मक नौकरियों में हैं, या परिवार से दूर छात्रावासों में रहकर पढ़ाई कर रहे हैं, उनमें टीबी के संक्रमण के मामले तेजी से फैलते देखे गए हैं।

नशीले पदार्थों का सेवन युवाओं की रोगप्रतिरोधक क्षमता को खोखला कर देता है। कम उम्र के युवाओं में कम खाकर और अनियोजित डायटिंग कर चुस्तदुरुस्त दिखने की प्रवृत्ति बेहद खतरनाक रूप लेती जा रही है। इससे उनमें टीबी के संक्रमण का खतरा बढ़ रहा है। आज जरूरत है टीबी जैसी खतरनाक जानलेवा बीमारी से बचने के लिए सरकार और सामाजिक संगठन, दोनों परस्पर मिलकर काम करें। तभी वर्ष 2025 तक भारत को टीबी मुक्त करने का लक्ष्य हासिल हो सकता है। हालांकि सरकारी एवं गैरसरकारी संस्थाओं द्वारा टीबी की रोकथाम के लिए देश में बहुत सारी योजनाएं चलायी जा रही हैं। लेकिन टीबी की बीमारी आज भी एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। जाहिर है, इससे निबटने के लिए हमें अपनी तैयारियों को अभी और अधिक पुख्ता करना पड़ेगा।

**vigyan.lekhak@gmail.com**

# ऊर्जा का प्राकृतिक ख़ज़ाना

# जैव ईंधन

*डॉ.विनीता सिंघल ने जीवविज्ञान में डी-लिट और विज्ञान लोकप्रियकरण में एम.फिल किया है। वे तीस वर्षों तक विज्ञान प्रगति, साइंस रिपोर्टर जैसी विज्ञान पत्रिकाओं की सह-संपादक रहीं। सात सौ से अधिक मूल लेख एवं चालीस से अधिक किताबें लिखीं तथा बीस से अधिक पुस्तकों का संपादन एवं अनुवाद किया। आप राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना स्रोत संस्थान नई दिल्ली से सह-संपादक के पद से सेवानिवृत्त हुईं। आप दिल्ली में रहती हैं।*

भारत अब उन देशों में से एक है जिन्होंने जैव ईंधन से विमान उड़ाने में सफलता पाई है। पिछले दिनों स्पाइसजेट ने देहरादून से दिल्ली के बीच बॉम्बार्डियर क्यू-400 विमान को जैव ईंधन से उड़ाने का सफल परीक्षण किया। पेट्रोलियम वैज्ञानिकों ने कठिन परिश्रम से रतनजोत (जट्रोफा) के फल से जैव ईंधन बनाने में सफलता प्राप्त की है। इस तकनीक को सबसे पहले अमेरिका ने हासिल किया था। इसके बाद आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और कनाडा ने जैव ईंधन से विमान उड़ाने में कामयाबी हासिल की। हालांकि 2012 में भारत का भारतीय पेट्रोलियम संस्थान (आईआईपी) कनाडा की मदद से कनाडा में ही जैव ईंधन से विमान उड़ाने का सफल प्रयोग कर चुका था। जैव ईंधन से विमान उड़ाने के प्रयास एक दशक पहले से हो रहे हैं। 2011 में अमेरिकन सोसाइटी फॉर टेस्टिंग एंड मैटेरियल द्वारा बायोफ्यूल को मान्यता देने के बाद से व्यावसायिक उड़ानों में इसका निरंतर इस्तेमाल किया जा रहा है।

जैव ईंधन का उत्पादन कोई नई संकल्पना नहीं है क्योंकि रुडोल्फ डीजल ने सन् 1895 में वनस्पति तेल से चलने वाला पहला डीजल इंजन विकसित किया था। सन् 1900 में रूडोल्फ डीजल ने मूंगफली के तेल से पहली बार इंजन चलाया। द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले ही वैज्ञानिक जान चुके थे कि डीजल इंजन अनेक अन्य प्रकार के ईंधन तेलों से भी चल सकता है। लेकिन उस समय मूंगफली के तेल से बना बायोडीजल काफी महंगा था। इसलिए इस ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया और वैसे भी उस समय पेट्रोलियम सस्ता व सुलभ होने के कारण वैकल्पिक ईंधनों की कुछ खास आवश्यकता भी नहीं थी। लेकिन अब वह दिन दूर नहीं जब ऊर्जा के क्षेत्र में आत्मनिर्भर होने के लिए जैव ईंधन की आवश्यकता होगी। वैकल्पिक ईंधनों की खोज का कारण प्राकृतिक ईंधन के विशाल स्रोत पेट्रोलियम की मात्रा का धीरे-धीरे कम होना, अंतर्राष्ट्रीय बाजार में इसकी बढ़ती कीमतों और इसके उपयोग से फैलती प्रदूषण की काली छाया ने मानव को पैट्रोलियम पदार्थों के विकल्प ढूंढने को मजबूर कर दिया है। इसी का नतीजा है कि आज बहुत सारे विकल्पों पर काम किया जा रहा है। जैव ईंधन भी उनमें से एक है। डीजल इंजन के जन्मदाता रूडोल्फ डीजल ने 1912 में ठीक ही कहा था कि आज वनस्पति तेल के ईंधन के रूप में उपयोग को महत्व नहीं दिया जा रहा है लेकिन आने वाले समय में यह उतना ही महत्वपूर्ण होगा जितना कि आज पेट्रोलियम पदार्थ हैं।

## बायोडीजल : एक विकल्प

आजकल वैकल्पिक ईंधनों के रूप में जैव ईंधन या बायोडीजल चर्चा में है। बायोडीजल पेड़-पौधों से निकाले गये रसायनों को पेट्रोईंधन में मिश्रित कर बनाया जाता है। बायोडीजल किसी भी वसा या तेल, जैसे सूरजमुखी, रेपसीड, अरंडी, फ्लैक्स, ताड़, नारियल या सोयबीन से बनाया जा सकता है। किसी पारम्परिक इंजन में बायोडीजल के प्रयोग से डीजल/पेट्रोल की तुलना में निकलने वाले हाइड्रोकार्बन और कार्बन मोनोऑक्साइड की मात्रा बहुत कम होती है। पर्यावरण को क्षति पहुँचाने वाले प्रदूषक इसमें अपेक्षाकृत कम मात्रा में पाये जाते हैं। इसके दहन से निकलने वाला धुआँ कम काला होता है और उसमें अम्लीय वर्षा कराने वाले सल्फर ऑक्साइड और सल्फेट की मात्रा भी

लगभग नगण्य होती है इसलिए इसका धुआँ हृदय व फेफड़ों के लिए कम हानिकारक होता है। यही कारण है कि यह ईंधन वायु को स्वच्छ रखने और भूमंडलीय गर्मी को रोकने में सहायक है। इस प्रकार स्वास्थ्य की दृष्टि से इसका प्रयोग कम खतरनाक है। अनेक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि बायोडीजल पर्यावरण व स्वास्थ्य के लिए पेट्रोलियम उत्पादों की तुलना में बेहतर होता है।

बायोडीज़ल की उपयोगिता धीरे-धीरे बढ़ रही है। बायोडीजल पेड़-पौधों से तैयार होने वाला ईंधन है। इसका प्रयोग पहले से चल रहे अधिकांश डीजल इंजनों में कोई परिवर्तन किये बिना किया जा सकता है, कुछ इंजनों में मात्र थोड़ा परिवर्तन करना पड़ता है। पेट्रोल पम्पों में मिलने वाले डीजल की तरह ही इसका उपयोग स्वचालित गाड़ियों व जनरेटर आदि को चलाने में किया जा सकता है। इसी को ध्यान में रखते हुए यहाँ भी सन् 1994 में बायोडीजल विकास बोर्ड की स्थापना की गयी जिसके अंतर्गत बायोडीजल उद्योग के लिए मानट्रो भी निर्धारित किये गये।

आज अनेक यूरोपीय देशों में पेट्रोडीजल के साथ 20 प्रतिशत बायोडीजल मिश्रित कर प्रयोग किया जा रहा है। बायोडीजल के उत्पादन में अग्रणी कहे जाने वाले देश फ्रांस में, विभिन्न वाहनों को चलाने के लिए पेट्रोडीजल के साथ 50 प्रतिशत बायोडीजल मिलाया जा रहा है। वैसे तो हमारे यहाँ भी बायोडीजल पर देश के विभिन्न संस्थानों में प्रयोग और शोध चल रहे हैं और इसमें सफलता भी मिली है। अब तक जैट्रोफा (रतनजोत) और पोंगेमिया पिन्नेटा के पौधों से जैव डीजल बनाने में सफलता मिल चुकी है। सबसे पहले 1930 में, कोलकाता में, ब्रिटिश इंस्टीट्यूट ऑफ स्टैन्डर्ड्स ने 11 अखाद्य तेलों का प्रयोग कर डीजल इंजन चलाया था। वर्ष 1986 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली ने डीजल इंजन चलाने के लिए अनेक वन वृक्षों की विभिन्न प्रजातियों जैसे महुआ (मधूका इंडिका) और नीम (एजाडिरेक्टा इंडिका) पर शोध कार्य आरंभ किया है। साथ ही दिल्ली कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग में बायोडीजल पर सफल प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलुरू में डीजल इंजन चलाने के लिए करंज (पोंगेमिया पिन्नाटा) पर और केंद्रीय

**जैट्रोफा के फलों तथा लकड़ी को दूसरे कामों में लाया जा सकता है। इसके सूखे बीजों में तीस से पैंतीस प्रतिशत तेल होता है। इस तेल का प्रयोग मोमबत्ती, साबुन तथा अन्य सौंदर्य प्रसाधनों को बनाने में होता है। इसका उपयोग मिट्टी के तेल के विकल्प के रूप में किया जाता है। तेल निकालने के बाद बची खली का उपयोग खाद के रूप में किया जाता है। जैट्रोफा के तेल को, एल्कोहल द्वारा ट्रांस-इस्टरीफिकेशन (वनस्पतिक तेलों से बायो डीजल बनाने की प्रक्रिया) करके डीजल में परिवर्तित किया जा सकता है।**

नमक एवं समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान, भावनगर में जैट्रोफा और जोजोबा (साइमॉन्डसिया चाइनेन्सिस) पर काम हो रहा है। केरल के ग्रामीण क्षेत्रों में पोंगेमिया पिन्नेटा के बीजों से तैयार तेल से जेनरेटर चलाये जाने का प्रदर्शन हो चुका है। बंगलुरू स्थित भारतीय विज्ञान अनुसंधान संस्थान में जैव डीजल परियोजना पर कार्यरत वैज्ञानिक डॉ.यू. श्रीनिवास के अनुसार तमिलनाडु के इरोड नगर में एक व्यक्ति बहुत समय से अपनी बुलेट मोटर साइकिल को जैव डीजल से चला रहा है। दिल्ली विश्वविद्यालय में एक मारुति जेन कार (डीजल) जैव डीजल से बीस हजार किलोमीटर चलायी जा चुकी है। कार प्रदाता मारुति उद्योग कम्पनी ने इसकी प्रामाणिकता की जांच स्वयं की है।

इस क्षेत्र में विस्तृत शोध के बाद भारतीय वैज्ञानिकों ने ऐसे सौ पौधों की पहचान की है जो बायोडीजल निष्कर्षण के लिए उपयुक्त हैं। कुछ प्रमुख पादप प्रजातियां जिनका उपयोग जैवईंधन प्राप्ति के लिए किया जा सकता है, उनमें से कुछ प्रजातियाँ इस प्रकार हैं: कॉर्न, काजू, ओट, पाम, रबड़, कैलेन्डुला, कपास, सोयबीन, रेपसीड, जैतून, अरंडी, जोजोबा, ऑयल पाम, कॉफी, लिनसीड, हेजलनट, पम्पकिन, तिल, सैफफ्लावर, धान, सूरजमुखी, मूंगफली और कुछ वन वृक्ष प्रजातियां।

पेट्रो उत्पादों से फैलने वाले प्रदूषण को कम करने और ईंधन के क्षेत्र में देश को आत्मनिर्भर बनाने के लिए आजकल राष्ट्रीय जैव डीजल नीति के बारे में कार्य हो रहा है। देश में पेट्रोलियम पदार्थों की कुल खपत का दो तिहाई हिस्सा विदेशों से आयात किया जाता है, जिसकी कीमत हमें विदेशी मुद्रा में चुकानी पड़ती है। अगर इसमें से एक छोटा सा हिस्सा भी कम कर दिया जाए तो देश की बहुत सारी विदेशी मुद्रा को बचाया जा सकता है। दूसरी ओर हमारे देश में पेट्रोलियम पदार्थ के जो ज्ञात संसाधन हैं वह आने वाले बीस वर्षों में समाप्त हो जाएंगे। लेकिन हमारे देश में जिस गति से आबादी बढ़ रही है और जिस रफ्तार से आर्थिक विकास हो रहा है, उससे स्पष्ट है कि आने वाले समय में ऊर्जा की खपत और बढ़ेगी। इसलिए ऊर्जा के वैकल्पिक साधनों पर काम करना बहुत जरूरी हो जाता है।

## जैव ऊर्जा का स्रोत : जैट्रोफा

आज उत्पन्न ऊर्जा संकट के परिप्रेक्ष्य में पूरे विश्व का ध्यान एक बार फिर जैट्रोफा की ओर गया है। और एक बार फिर से इस पौधे की खोजबीन प्रारंभ हो गयी है। रतनजोत, जमालगोटा, जंगली अरंडी या जैट्रोफा करकस या फिजिक नट एक बहुउद्देशीय सूखा सह झाड़ी या लघु वृक्ष है। हालांकि यह उष्ण कटिबंधी दक्षिण अमरीका मूल का पौधा है। वर्तमान में यह पूरे अफ्रीका एवं एशिया में फैला है। सूखा सह होने के कारण इसे क्षरित भूमि को सुधारने तथा फसलों को जंगली पशुओं से बचाने के लिए बाड़ के रूप में भी उगाया जाता है।

जैट्रोफा के फलों तथा लकड़ी को दूसरे कामों में लाया जा सकता है। इसके सूखे बीजों में तीस से पैंतीस प्रतिशत तेल होता है। इस तेल का प्रयोग मोमबत्ती, साबुन तथा अन्य सौंदर्य प्रसाधनों को बनाने में होता है। इसका उपयोग मिट्टी के तेल के विकल्प के रूप में किया

जाता है। तेल निकालने के बाद बची खली का उपयोग खाद के रूप में किया जाता है। जैट्रोफा के तेल को, एल्कोहल द्वारा ट्रांस-इस्टरीफिकेशन (वनस्पतिक तेलों से बायो डीजल बनाने की प्रक्रिया) करके डीजल में परिवर्तित किया जा सकता है। जैट्रोफा के तेल से बने डीजल को बायो डीजल की श्रेणी में रखा गया है क्योंकि इसमें सल्फर की मात्रा बहुत कम होती है। किसी भी डीजल इंजन में कोई भी परिवर्तन किए बिना इस तेल का प्रयोग किया जा सकता है। जैट्रोफा डीजल के ज्वलन से उत्सर्जित गैसों में ग्रीन हाउस गैसों तथा कार्बन मोनोऑक्साइड के परिमाण में उल्लेखनीय कमी देखी गयी है। इस प्रकार जहाँ इसके लगाने से भूमि क्षरण जैसी समस्याओं का समाधान संभव है वहीं इसका तेल जलाने से धरती के बढ़ते तापमान को कम करने में भी सहायता मिलेगी। जैट्रोफा न केवल पृथ्वी का पर्यावरण सुधारने में सहायक है बल्कि पर्यावरण से कार्बन डाइऑक्साइड गैस घटाने में भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। कई वैज्ञानिकों का मानना है कि पत्तियों की संख्या अधिक होने और चौड़े आकार की होने के कारण, यह अधिक मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित कर वातावरण को स्वच्छ बनाता है।

जैट्रोफा की खेती से मिट्टी में कार्बन की मात्रा बढ़ने की संभावना होती है जबकि अन्य खाद्यान्न फसलों के उत्पादन से कार्बन की मात्रा घटती है। इसकी खेती बहुत श्रम साध्य नहीं होती। एक बार लगाने के बाद एक या दो वर्ष बाद फल आने शुरू हो जाते हैं। पांच सालों में यह पौधा पूर्ण विकसित हो अधिकतम फसल देने लगता है जो अगले चालीस-पैंतालिस वर्षों तक निरंतर प्राप्त की जा सकती है। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी इसे उगाया जा सकता है। यद्यपि इसकी पत्तियों में एक विशेष प्रकार का विष होता है जिसकी वजह से जानवर इसे नहीं खाते। हालांकि आरंभिक अवस्था में इसे कीटनाशकों से बचाना आवश्यक होता है। लेकिन एक वर्ष के बाद इसे किसी भी प्रकार के कीटों या बीमारियों का खतरा नहीं रहता। प्रारंभिक वर्षों में जैट्रोफा से 800-3500 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीजों की उपज प्राप्त होती है लेकिन पाँच वर्षों के बाद अगले 40-45 वर्षों तक लगातार 1200-5000 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक उपज प्राप्त होती है। उचित रख रखाव, सिंचाई तथा उर्वरक इत्यादि के प्रयोग से अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

**जैट्रोफा के तेल से बायोडीजल बनाने का छोटा संयंत्र बहुत ही कम लागत में लग सकता है। तेल से बायोडीजल बनाने की विधि को ट्रांसइस्टरीफिक्केशन कहते हैं। इस प्रक्रिया में जेट्रोफा के तेल को मिथेनाल और सोडियम या पोटैशियम हाइडॉक्साइड के साथ एक निश्चित तापमान पर गर्म किया जाता है, जिसमें मिथाइल एस्टर के रूप में बायोडीजल तथा ग्लिसरीन मिलता है।**

इसके विविध उपयोगों को देखते हुए आजकल अनेक प्रदेशों की सरकारें पेट्रो डीजल के वैकल्पिक स्रोतों की खोज के अभियान में जुटी हैं जिनमें छत्तीसगढ़ अग्रणी है। इस प्रदेश ने बायोडीजल के अनुसंधान और प्रयोग को प्रोत्साहन देने के लिए छत्तीसगढ़ बायोडीजल विकास प्राधिकरण की स्थापना की है।

छत्तीसगढ़ के जंगलों में रतनजोत (जैट्रोफा करकस) शताब्दियों से पाया जाता है। कुछ लोग अपने खेतों में इसकी बाड़ लगाते हैं, क्योंकि जंगली और पालतू पशु इसकी पत्तियां नहीं खाते हैं। जैट्रोफा के बीजों से बायोडीजल की उत्पादन इकाई लगभग सवा लाख रुपयों में स्थापित की जा सकती है। छत्तीसगढ़ बायोडीजल विकास प्राधिकरण ने 2005 में बायोडीजल उत्पादन संयंत्र माना हवाई अड्डा मार्ग पर स्थित ऊर्जा पार्क के समीप स्थापित किया। ऐसे संयंत्रों की स्थापना के लिए उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के लिए छत्तीसगढ़ बायोडीजल विकास प्राधिकरण आर्थिक सहायता भी प्रदान करता है।

## कैसे बनता है जैट्रोफा से बायोडीजल

जैट्रोफा के बीजों से तेल निकालने की प्रक्रिया बहुत ही सरल है। सूखे हुए बीज को साधारण स्पेलर में डाल कर तेल निकाला जाता है। इस तेल को साधारण शोधन के पश्चात किसान स्वयं ही अपने डीजल चालित कृषि उपकरणों एवं वाहनों में प्रयोग करके आत्मनिर्भर हो सकते हैं।

जैट्रोफा के तेल से बायोडीजल बनाने का छोटा संयंत्र बहुत ही कम लागत में लग सकता है। तेल से बायोडीजल बनाने की विधि को ट्रांसइस्टरीफिकेशन कहते हैं। इस प्रक्रिया में जेट्रोफा के तेल को मिथेनाल और सोडियम या पोटेशियम हाइडॉक्साइड के साथ एक निश्चित तापमान पर गर्म किया जाता है, जिसमें मिथाइल एस्टर के रूप में बायोडीजल तथा ग्लिसरीन मिलता है।

इस प्रक्रिया में सबसे पहले जेट्रोफा के बीज को साधारण स्पेलर में पिराई करने के बाद तेल को महीन कपड़े से छान लेते हैं। तत्पश्चात तेल को ट्रांस-इस्टरीफिकेशन संयंत्र में डालकर पचास डिग्री सेंटीग्रेट तक गर्म करते हैं। उसके बाद उसमें मिथेनाल और सोडियम या पोटैशियम हाइडॉक्साइड का मिश्रण, जिसे सोडियम मिथॉक्साइड कहते हैं, धीरे-धीरे मिलाते हैं। इसके बाद इसे स्थिर रखने पर ग्लिसरीन अलग हो जाती है जिसको अलग इकट्ठा कर लिया जाता है। इसके बाद बायोडीजल में सोडियम या पोटैशियम के अंश को निकालने के लिए बायोडीजल की बबल या बुलबुला पद्धति से सफाई की जाती है। उसके बाद बायोडीजल को 100 डिग्री सेंटीग्रेट तक गर्म किया जाता है। इस तरह से प्राप्त बायोडीजल को इंजन में प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रक्रिया में 100 लीटर जेट्रोफा के तेल से 100 लीटर बायोडीजल तथा 10 लीटर ग्लिसरीन मिलती है।

## बहुउपयोगी बायोडीजल

बायोडीजल पैट्रोलियम डीजल का एक अच्छा विकल्प है क्योंकि इससे निम्नलिखित लाभ हैं:

- यह गैर पारंपरिक ऊर्जा का स्रोत है। यह एकमात्र ऐसा वैकल्पिक ईंधन है जिसे पारंपरिक डीजल इंजन में बिना कोई परिवर्तन किए प्रयोग किया जा सकता है। इसे कहीं भी संग्रहित किया जा सकता है।
- बायोडीजल किसी भी प्रकार के वनस्पति

तेल से बनाया जा सकता है।

- इसके प्रयोग एवं शुद्धिकरण की विधि बहुत सरल है।
- यह इंजन में पूर्ण रूप से जल जाता है क्योंकि इसमें इस से ग्यारह प्रतिशत ऑक्सीजन होती है।
- इसमें सल्फर की मात्रा बहुत कम होती है।
- बायोडीजल का सीटेन नंबर पैट्रोलियम डीजल के लगभग बराबर होता है इसलिए यह इंजन में आसानी से जलता है।
- बायोडीजल प्रयोग करने से इंजन में से धुआँ कम निकलता है तथा धुएँ में जहरीली गैसों की मात्रा बहुत कम पायी जाती है, जिससे वायु प्रदूषण नहीं बढ़ता।
- बायोडीजल को अकेले या पैट्रोलियम डीजल के साथ मिश्रित करके भी प्रयोग किया जा सकता है। आमतौर पर बीस प्रतिशत बायोडीजल के साथ अस्सी प्रतिशत पैट्रोलियम डीजल मिलाने की संस्तुति की गयी है।
- बायोडीजल का प्रयोग करने से ऊर्जा की समस्या हल हो सकती है।
- इसकी खेती एवं प्रसंस्करण से रोजगार भी मिल सकता है। स्थानीय रोजगार बढ़ने से ग्रामीणों के शहर की ओर पलायन में कमी होगी।
- जैट्रोफा जनित जैव खाद द्वारा मृदा की उर्वरता में सुधार होगा।
- इसे पशु नहीं खाते इसलिए बाड़ के रूप में लगाने पर अन्य महत्वपूर्ण खाद्य फसलों की जंगली पशुओं से सुरक्षा होती है।
- जैट्रोफा की पत्तियों, तने की छाल और बीजों के छिलकों से अन्य उपयोगी रासायनिक पदार्थ प्राप्त किए जा सकते हैं।
- भूमि क्षरण रोकने में सहायक होता है।
- प्रति वर्ष दस टन प्रति हेक्टेयर कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करने में सहायक होता है।
- यह जैव अपक्षीणक होता है और इसका रखरखाव सरल और कहीं भी लाना-ले जाना सुरक्षित होता है।
- बायोडीजल के प्रयोग से इंजन की आयु बढ़ती है क्योंकि यह पेट्रोलियम डीजल की अपेक्षा अच्छा स्नेहक भी है।

मोटर वाहन ईंधन में आत्मनिर्भरता लाने के लिए भारत सरकार ने जैट्रोफा के

**योजना आयोग का अनुमान है कि आगे चल कर देश को लगभग 19 करोड़ मीट्रिक टन तेल की आवश्यकता पड़ेगी। जिसके लिए यदि जैट्रोफा अभियान सफल हो जाता है तो कुल तेल की मांग का पचास प्रतिशत से अधिक हिस्सा जैट्रोफा के तेल से पूरा हो सकेगा।**

विकास के लिए एक महत्वाकांक्षी योजना बनाई है। इस पूरे अभियान का संचालन योजना आयोग कर रहा है। इस अभियान के लिए साढ़े सत्रह हजार करोड़ रुपयों का प्रावधान किया गया है।

इस योजना को साकार करने के लिए भारत के योजना आयोग ने 18 राज्यों के 200 गांवों में जैट्रोफा की खेती की परियोजना आरंभ की है। ये राज्य हैं: अरूणाचल प्रदेश, बिहार, झारखंड, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, कर्नाटक, केरल, महाराष्ट्र, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तराखंड और उत्तर प्रदेश। केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय दस हजार किसानों की पहचान कर इन राज्यों में जैट्राफा की खेती का शुभारंभ करेगा। देश के प्रत्येक जिले में जैट्रोफा की खेती के लिए एक करोड़ रुपया दिया जाएगा। चूंकि जैट्रोफा की खेती केवल तेल उत्पादन के लिए नहीं है, इसके पर्यावरणी तथा भूमि संबंधी लाभों को ध्यान में रखते हुए केंद्रीय पर्यावरण एवं वन, कृषि एवं सहकारिता तथा पैट्रोलियम मंत्रालयों को भी इस अभियान में शामिल किया गया है।

योजना आयोग का अनुमान है कि आगे चल कर देश को लगभग 19 करोड़ मीट्रिक टन तेल की आवश्यकता पड़ेगी। जिसके लिए यदि जैट्रोफा अभियान सफल हो जाता है तो कुल तेल की मांग का पचास प्रतिशत से अधिक हिस्सा जैट्रोफा के तेल से पूरा हो सकेगा। तेल के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के लिए यह एक सोची समझी रणनीति है ऐसा विशेषज्ञों का अनुमान है। लेकिन यह ध्यान रखना आवश्यक है कि केवल निम्न श्रेणी की भूमि में बिना रख-रखाव, सिंचाई और उर्वरकों के जैट्रोफा का उत्पादन अधिक नहीं हो पाता है इसलिए इस अभियान की सफलता के लिए जैट्रोफा की खेती को वैज्ञानिक व्यावहारिक आधार देना तथा इसका उत्पादन बढ़ाने के साथ साथ सहउत्पादों के उपयोग द्वारा लागत को कम करना कुछ ऐसे उपाय हैं जो इस अभियान को सफल बनाने में सहायक होंगे।

जैट्रोफा की खेती को बढ़ावा देने के लिए भारतीय रेल तथा अन्य संस्थाएं अनुपजाऊ भूमि पर जैट्रोफा रोपण करवा रही हैं, ताकि भविष्य में भारतीय रेल भी अपने डीजलचालित रेलवे इंजन का प्रचालन जेट्रोफा से प्राप्त बायोडीजल से करे। ऐसे में न केवल हमारा देश डीजल के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हो सकेगा बल्कि किसान भी बेकार पड़ी बंजर भूमि का उपयोग कर आय एवं स्वरोजगार प्राप्त कर सकेंगे जिसके परिणाम स्वरूप पर्यावरण प्रदूषण कम करने में भी मदद मिलेगी।

## विवादों के घेरे में जैट्रोफा

कुछ पर्यावरणविद् जैट्रोफा से बायोडीजल का उत्पादन विपत्तिकारक मानते हैं। उनके अनुसार मैक्सिकन मूल का यह पौधा कैंसरकारी है और आस-पास की वनस्पतियों पर इसके प्रभाव, रोगकारकता, मृदा परीक्षण और पारिस्थितिकीय प्रभाव की जाँच होनी चाहिए। इसके बजाय करंज और महुआ की खेती को बायोडीजल प्राप्ति के लिए प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए क्योंकि ये पौधे देशज हैं और इनके बीजों में तेल अधिक मात्रा में पाया जाता है। अधिकांश विशेषज्ञ जैट्रोफा को विपत्तिकारक नहीं मानते हैं। उनके अनुसार पेट्रोडीजल में बीस प्रतिशत बायोडीजल मिलाकर बनाये गये मानक अनुपात से भी करोड़ों रुपयों की विदेशी मुद्रा बचायी जा सकती है।

मैक्सिको में जैट्रोफा की अनेक प्रजातियाँ उपलब्ध हैं जिनमें विषकारक नहीं पाए जाते हैं। होहेनहीम विश्वविद्यालय में इस संदर्भ में अनुसंधान हुआ है। छः वैज्ञानिकों के

इस दल में तीन वैज्ञानिक (टी. एन. भंडारे, जे. बी.पांडे, एम.सुजाता) भारतीय हैं। इस अनुसंधान में अपने देश के तीन संस्थान सहयोग कर रहे हैं - नासिक स्थित सहकारी कृषि वानिकी परिसंघ, भावनगर स्थित केन्द्रीय नमक व समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान और हैदराबाद स्थित तिलहन अनुसंधान संस्थान। जैट्रोफा की जिस विषहीन प्रजाति के बारे में अनुसंधान हो रहा है, उसमें विषकारक प्रजाति की सभी विशेषताएं पायी जाती हैं किन्तु इसमें कैंसरकारी तथा विषकारी गुण नहीं पाये गये। नयी दिल्ली स्थित टाटा ऊर्जा अनुसंधान संस्थान ने भी जैट्रोफा से बायोडीजल के उत्पादन को सुरक्षित विकल्प माना है।

जहाँ एक ओर दसवीं पंचवर्षीय योजना में योजना आयोग ने जैट्रोफा की बड़े पैमाने पर खेती के लिए एक विशाल योजना बनाई थी, वहीं ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप में योजना आयोग ने देश के विभिन्न भागों में बायोडीजल उत्पादन के लिए हो रही जैट्रोफा की खेती से पड़ने वाले पर्यावरणीय व सामाजिक आर्थिक प्रभावों को लेकर चिंता व्यक्त की है। रिपोर्ट में कहा गया है कि जैट्रोफा की फसल के लिए बहुत अधिक पानी की जरूरत होती है। इसकी खेती से न केवल पीने के पानी की कमी होगी बल्कि पशुओं की चरने वाली भूमि पर भी अतिक्रमण होगा। हालांकि योजना आयोग ने ही अप्रैल 2003 में केंद्र सरकार पर बड़े पैमाने पर जैट्रोफा की खेती के लिए दवाब डाला था कि वह इस बात के लिए प्रयत्न करे कि सन 2010 तक डीजल की कुल खपत में बायोडीजल का योगदान बीस प्रतिशत तक हो जाए। जैट्रोफा की खेती का प्रचार जिस तेजी से हो रहा है उससे अनेक मोटे अनाज और अन्य खाद्य पदार्थ जिनका उत्पादन व्यर्थ भूमि में हो रहा था, खतरे में पड़ गये हैं। अनाज व्यापारियों का कहना है कि देश में खाद्य तेलों की भारी कमी है। इसलिए इन स्थानों पर बजाय जैट्रोफा के मूंगफली इत्यादि उपजा कर खाद्य तेल क्यों न प्राप्त किया जाए। कृषि वैज्ञानिकों ने तो जैट्रोफा की खेती पर ही प्रश्नचिन्ह लगा दिया है, उनका कहना है कि इसके स्थानापन्न के रूप में करंज जैसी अन्य देशज प्रजातियां मौजूद हैं। लेकिन जैट्रोफा के पक्ष में यह दलील दी जा रही है कि यह बहुवर्षीय मजबूत झाड़ीदार वृक्ष है जिसे सीमांत भूमि पर भी सुगमता से उगाया जा सकता है।

दूसरे इसके बीजों में लगभग तीस प्रतिशत तेल समाहित होता है, जिसका उपयोग बायोडीजल उत्पादन के लिए किया जा सकता है। अनुमान के अनुसार रोपण के छठे वर्ष से जैट्रोफा के माध्यम से ढाई टन प्रतिवर्ष प्रति हेक्टेयर बायोडीजल की प्राप्ति होगी। लेकिन वैज्ञानिकों के अनुसार व्यावसायिक उत्पादन के लिए सिंचाई के साथ साथ नियमित कटाई, निराई-गुड़ाई सभी की जरूरत होगी। विशेषज्ञों का कहना है कि जैट्रोफा अपनी पत्तियों को गिराकर केवल दो-तीन वर्षों तक ही सूखे का मुकाबला कर सकता है क्योंकि जैट्रोफा की जड़ें बहुत गहरी नहीं होती इसलिए उसे ऊपरी सतह पर ही पानी की जरूरत होती है जबकि करंज की जड़ें दस मीटर गहरी होती हैं अर्थात वह ऊपरी सतह के पानी का इस्तेमाल नहीं करता। अन्य वृक्षों के समकक्ष न पनप सकने के कारण वन सघनीकरण के लिए भी जैट्रोफा का उपयोग नहीं किया जा सकता। इसी कारण कृषि वैज्ञानिक इसका विरोध कर रहे हैं। उनका कहना है कि लंबे समय में जैव विविधताओं को नुकसान पहुँचेगा।

## बायोडीजल का एक अन्य विकल्प - काई

जैविक रूप से सौर ऊर्जा एकत्रित करने का एक सरल उपाय है शैवाल या काई उगाना जिसे वसीय पदार्थ बनाने के लिए उत्प्रेरित किया जा सकता है और इन पदार्थों से पेट्रोलियम उत्पाद निष्कर्षित किए जा सकते हैं। काई को कुछ समय से स्वास्थ्य वर्धक उत्पादों के रूप में और व्यर्थ जल उपचार के लिए भी उगाया जाने लगा है। सामान्य परिस्थितियों में काई में हाइड्रोकार्बन और प्रोटीन होते हैं। वसा अंश शुष्क भार का बीस प्रतिशत से ज्यादा नहीं होता। हालांकि लवणीय वातावरण में वसा कुल भार की बहत्तर प्रतिशत तक हो सकती है। ताजे जल में उगने वाली काई की विभिन्न जातियों को आज पैट्रोलियम रिजर्व के रूप में माना जा रहा है क्योंकि वे हाइड्रोकार्बन बनाने में सक्षम हैं। आशा की जा रही है कि काई कि विभिन्न जातियों से निष्कर्षित हाइड्रोकार्बनों को गैसोलीन और अन्य पैट्रोलियम उत्पाद प्राप्त करने के लिए मौजूदा पैट्रोलियम इकाइयों में ही सरलता से संसाधित किया जा सकता है। काई को बायोडीजल बनाने का एक सुगम स्रोत समझने का एक और भी कारण है। वह यह है कि इसे देश के अनुपयोगी रेगिस्तान जैसे क्षेत्रों में लवणीय जल और तेज धूप में भी उगाया जा सकता है। जमीन के नीचे जलभृतों में मौजूद लवण जल कुछ विशेष काम नहीं आता। हालांकि इस का रासायनिक संघटन समुद्र जल से भिन्न होता है फिर भी इसमें काई की कई प्रजातियां सरलता से उगाई जा सकती हैं। इतना ही नहीं इसके ऐसे विभेद भी विकसित किए जा सकते हैं जो रेगिस्तानी क्षेत्रों में उगाए जाने के लिए अधिक उपयुक्त हों।

एल्गी या शैवाल, सूक्ष्मजीवी साइनोबैक्टीरिया से लेकर विशाल सिवार तक को कहते हैं। अधिकांश शैवाल अन्य पौधों की ही तरह सूर्य के प्रकाश को ऊर्जा में बदलते हैं, हालांकि विभिन्न प्रकार के शैवालों में आनुवंशिक विविधता ने ही वैज्ञानिकों को शैवालों के ऐसे विलक्षण गुणों के बारे में बताया है जिन्हें जैवईंधन तकनीकें विकसित करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। शैवालों से जैवईंधन विकसित करने सबसे ज्यादा सहायक किसी भी क्षेत्र में इसका बहुत तेजी से बढ़ना है। अध्ययनों में देखा गया है कि शैवाल की कुछ प्रजातियां अपने शुष्क भार से साठ प्रतिशत ज्यादा तेल का उत्पादन करती हैं। क्योंकि ये जलीय माध्यम में उगती है और इन्हें पर्याप्त मात्रा में पानी, कार्बन डाइऑक्साइड और पानी में घुले पोषक तत्व मिलते हैं, इसलिए सूक्ष्मशैवाल फोटोबायोरिएक्टर या तालाबों में बड़ी मात्रा में बायोमास और उपयोग करने योग्य तेल बनाने में सक्षम होते हैं। बाद में इस तेल को बायोडीजल में बदल कर गाड़ियों में इस्तेमाल किया जा सकता है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि शैवाल अन्य पारंपरिक बायोमास फीडस्टॉक की तुलना में 10 या बल्कि 100 गुना तक अधिक उत्पादनशील है। शैवालों के उत्पादनशीलता के गुण से सतत और सस्ते जैवईंधन बनाना किसी चुनौती से कम नहीं था। एक बार फलने के बाद, शैवाल को कारों, ट्रकों, ट्रन और हवाई जहाजों के लिए

ईंधन बनाने के लिए अपरिष्कृत पदार्थ में सरलता से प्रसंस्कृत किया जा सकता है। शैवाल से जैवईंधन कई रूपों में प्राप्त किया जा सकता है:

**ब्यूटेनॉल** : सौर चालित बायोरिफाइनरी का प्रयोग करके शैवाल या डायटम से ब्यूटेनॉल बनाया जा सकता है। इस ईंधन का ऊर्जा घनत्व गैसोलीन की अपेक्षा दस प्रतिशत कम होता है, लेकिन इथेनॉल और मिथेनॉल से ज्यादा होता है। अधिकांश गैसोलिन इंजनों में, गैसोलीन के स्थान पर, इंजन में कोई परिवर्तन किए बिना ब्यूटेनॉल का प्रयोग किया जा सकता है। अनेक परीक्षणों में, ब्यूटेनॉल को गैसोलीन के समान ही पाया गया है। जब इसे गैसोलीन के साथ मिला कर प्रयोग किया जाता है, यह इथेनॉल या ई85 से बेहतर परिणाम प्रदर्शित करता है।

**बायोगैसोलीन** : बायोमास से बनायी जाने वाली गैसोलीन ही बायोगैसोलीन होती है। पारंपरिक रूप से उत्पादित गैसोलीन की तरह इसमें भी प्रत्येक अणु में 6 यानि हेक्सेन और 12 यानि डोडिकेन कार्बन परमाणु होते हैं और इसका उपयोग इन्टरनल कम्बशचन इंजनों में किया जा सकता है।

**मीथेन** : मीथेन, प्राकृतिक गैस का प्रमुख घटक होती है, विभिन्न विधियों जैसे कि गैसीफिकेशन, पायरोलिसिस और अनॉक्सी पाचन द्वारा शैवाल से बनायी जा सकती है। गैसीफिकेशन और पायरोलिसिस विधि में मीथेन को अत्यंत उच्च ताप और दाब पर निष्कर्षित किया जाता है। अनॉक्सी पाचन विधि में शैवाल को सरल घटकों में विखंडित किया जाता है; इसके बाद एसिडोजेनिक बैक्टीरिया जैसे सूक्ष्मजीवों का प्रयोग कर वसा अम्लों में बदल कर, ठोस कणों को हटा कर मीथेनोजेनिक बैक्टीरिया मिलाकर, अंततः मीथेन युक्त गैस मिश्रण बनाया जाता है।

अनेक अध्ययनों में सफलतापूर्वक देखा गया है कि सूक्ष्मशैवाल से बने बायोमास को अनॉक्सी पाचन द्वारा बायोगैस में बदला जा सकता है। इसीलिए बिजली बनाने के लिए व्यर्थ बायोमास में निहित ऊर्जा अनॉक्सी पाचन द्वारा प्राप्त की जाती है।

**इथेनॉल** : पॉरफाइरिडियम क्रुएन्टम नामक शैवाल का प्रयोग, इसमें बड़ी मात्रा में मौजूद कार्बोहाइड्रेट के कारण इथेनॉल उत्पादन में किया जाता है।

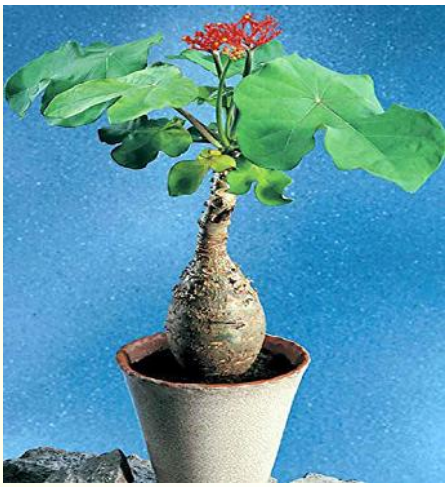

**जैव ईंधन एक विकल्प हो सकता है लेकिन यही एकमात्र अंतिम विकल्प नहीं है। विकल्प ऐसा होना चाहिए जो भावी पीढ़ी के लिए खतरा न उत्पन्न करे। अन्यथा जैवईंधन जैवविविधता को नुकसान पहुँचाने के साथ ही खेती योग्य जमीन भी निगल जाएगा और खाद्य सुरक्षा के लिए भी खतरा बन जाएगा।**

**ग्रीन डीजल** : शैवाल का प्रयोग 'ग्रीन डीजल' बनाने के लिए किया जाता है। ग्रीन डीजल को नवीकरणीय डीजल, हाइड्रोट्रीटिंग वनस्पतिक तेल या हाइड्रोजन-व्युत्पन्न नवीकरणीय डीजल भी कहते हैं। डीजल इंजनों में प्रयोग करने के लिए अणुओं को हाइड्रोट्रीटिंग रिफाइनरी प्रक्रिया द्वारा छोटी हाइड्रोकार्बन शृंखलाओं में तोड़ा जाता है। इसमें पेट्रोलियम से बने डीजल जैसे ही रासायनिक गुण होते हैं अर्थात इसके वितरण और उपयोग के लिए नए इंजन, पाइपलाइनों और अवसंरचना की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसके उत्पादन में पेट्रोलियम के उत्पादन जितना ही खर्च आता है। यही कारण है कि शैवाल से प्राप्त तेल के हाइड्रो-डीऑक्सीजनेशन को आर्थिक रूप से सुसाध्य बनाने के लिए प्रभावी उत्प्रेरकों की खोज करना एक तकनीकी चुनौती है।

**जेटफ्यूल** : दिन पर दिन जेटफ्यूल की बढ़ती कीमतों से एयरलाइन कंपनियों पर बढ़ते दवाब के कारण उनके लिए इसका विकल्प खोजना आवश्यक हो गया है और शैवाल जेटफ्यूल इसका एक अच्छा विकल्प है। इंटरनेशनल एयर ट्रान्सपोर्ट एसोसिएशन शैवाल आधारित जेटफ्यूल पर अनुसंधान, विकास और प्रस्तरण के लिए सहायता प्रदान कर रहा है। बल्कि यू एस मिलिट्री ने हाल ही में जेटफ्यूल बनाने के लिए शैवाल के तालाबों से बड़े पैमाने पर तेल का उत्पादन आरंभ किया है।

पर्यावरणविद न केवल जैट्रोफा से बायोडीजल बनाने के विरूद्ध हैं बल्कि वे किसी भी प्रकार के जैवईंधन के इस्तेमाल पर उंगली उठा रहे हैं। उनका कहना है कि कुछ जैवईंधन पर्यावरण के लिए जीवाश्मी ईंधन से भी ज्यादा महंगे सिद्ध हो सकते हैं। विज्ञान पत्रिका 'साइंस डेली' के अनुसार यह तो सर्वविदित है कि जीवाश्मी ईंधन ग्लोबल वार्मिंग बढ़ाते हैं लेकिन जैवविविधता को नुकसान पहुँचा कर और वन भूमि को खत्म करके जैवईंधन भी ग्लोबल वार्मिंग बढ़ाने में बराबर की भागीदारी निभाएंगे। पर्यावरण पर काम करने वाली संस्था ग्रीन पीस के जलवायु एवं ऊर्जा विशेषज्ञों का भी यही कहना है कि यदि जैवईंधन का ठीक से इस्तेमाल नहीं किया गया तो यह एक बड़ी समस्या पैदा कर सकता है। जैवईंधन के लिए अगर जंगलों को काटा जाएगा तो पेट्रोल और डीजल की तुलना में यह पर्यावरण को कहीं अधिक प्रदूषित करेगा।

जैवईंधन एक विकल्प हो सकता है लेकिन यही एकमात्र अंतिम विकल्प नहीं है। विकल्प ऐसा होना चाहिए जो भावी पीढ़ी के लिए खतरा न उत्पन्न करे। अन्यथा जैवईंधन जैवविविधता को नुकसान पहुँचाने के साथ ही खेती योग्य जमीन भी निगल जाएगा और खाद्य सुरक्षा के लिए भी खतरा बन जाएगा। जैसा कि ब्राजील में हो रहा है। जैवईंधन को वैकल्पिक स्रोत बनाने से पहले यह तय करना होगा कि इसे किस जमीन पर उगाना है। सुरक्षा उपाय बहुत जरूरी हैं। यह सुनिश्चित करना होगा कि जैवईंधन के लिए न तो जंगल काटे जाएं और न ही इतनी खेती योग्य जमीन का इस्तेमाल हो कि खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ जाए। व्यर्थ पड़ी भूमि पर भी अगर जैवईंधन के लिए खेती की जाती है तो उसका आर्थिक लाभ स्थानीय लोगों को मिलना चाहिए, क्योंकि वह भूमि उनके लिए तो उपयोगी है। इससे सामाजिक संकट से भी बचा जा सकेगा।

**vineeta_niscom@yahoo.com**

# महासागर का कचराघर
# द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच

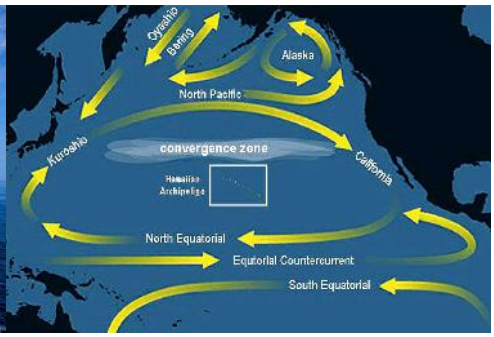


डॉ. शुभ्रता मिश्रा

*वनस्पति शास्त्र में शोध करने वाली डॉ. शुभ्रता मिश्रा युवा विज्ञान लेखिका हैं आपने इंडिया साइंस वॉयर, विज्ञान प्रसार में अब तक 350 विज्ञान कथा और लेख लिखे हैं। आपके विज्ञान लेख आकाशवाणी से प्रसारित होते रहे हैं। अंग्रेजी में पंद्रह तथा हिन्दी में पांच पुस्तकें लिखीं जिनमें 'भारतीय अंटार्कटिक संभारतंत्र' काफी चर्चित हुई है। इस किताब को राष्ट्रीय अंटार्कटिक एवं समुद्री अनुसंधान केन्द्र, पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित किया गया है। कई पुरस्कारों से सम्मानित डॉ. शुभ्रता गोवा में रहती हैं।*

पृथ्वी के लगभग तीन-चौथाई भाग में विस्तारित प्रशांत, अटलांटिक, हिंद, आर्कटिक और दक्षिणी महासागर वे पाँच महासागर हैं, जिनके आधार पर जलवायु और मौसम प्रणालियां संचालित होती हैं। ये ही वे जलस्त्रोत हैं, जो वैश्विक कार्बन उत्सर्जन के अवशोषण द्वारा जलवायु परिवर्तन के प्रतिरोधक का काम भी करते हैं। भौगोलिक उत्तरदायित्वों का करोड़ों वर्षों से सतत् निर्वहन करते आ रहे महासागर मानव स्वार्थ और उसकी अनुत्तरदायी प्रवृत्ति के कारण प्रदूषण का गम्भीर शिकार हो गए हैं। आज हाल यह है कि महासागरों में प्रदूषण को अवशोषित कर पाने की क्षमता भी पूर्णता के कगार पर है। कई रिपोर्टों के मिले जुले परिणामों से स्पष्ट होता है कि पिछली दो शताब्दियों में भूमि पर उत्पन्न सभी तरह का लगभग 525 अरब टन कचरा महासागरों में समा चुका है। इसके अलावा मानवीय गतिविधियों के कारण उत्सर्जित कार्बन का औसतन आधा भाग भी महासागरों ने स्वयं में समाहित कर लिया है। सार रूप में कहा जाए तो शताब्दियों से धरती का कचरा, कॉर्बन डाईऑक्साइड और अपशिष्ट पदार्थ को समेटते समेटते दुनिया के महासागरों में कई सारे कचराघर बन गए हैं।

इन समुद्री कचराघरों में भरे कचरे का फैलना बहुत कुछ महासागरीय जल के उस बहाव पर निर्भर करता है, जिसे समुद्रविज्ञान की भाषा में महासागरीय जल घूर्णन चक्र अथवा ज़ायर (gyre) कहते हैं। जायर से तात्पर्य किसी सागरीय या महासागरीय क्षेत्र में घूर्णन करने वाले, अर्थात् किसी क्षेत्र विशेष में घूमने वाले जल प्रवाह से होता है। जायरों में जल एक ही बड़े क्षेत्र में गोल-गोल घूमता रहता है और साथ में इनमें भारी वायु प्रवाह भी चलता है। जायर मूलतः भौतिक विज्ञान के कॉरिऑलिस प्रभाव और फेरेल के नियम पर काम करते हैं। प्रायः महासागरीय जायर पृथ्वी के घूर्णन से होने वाले कॉरिऑलिस प्रभाव के कारण जल व वायु दोनों में भ्रमिलता (Vorticity) से पैदा हुए घूर्णन के कारण बनते हैं। वहीं फेरेल के नियम के अनुसार पृथ्वी पर मुख्य रूप से चलने वाली सभी हवाएं पृथ्वी की गति के कारण उत्तरी गोलार्द्ध में दाहिनी ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में बायीं ओर मुड़ जाती हैं। पाँचों महासागरों में अनेकानेक जायर होते हैं, जिनके बहाव और घूर्णन की दिशा भौगोलिक परिथितियों के अनुसार अलग-अलग होती है। पृथ्वी के पाँच प्रमुख उल्लेखनीय महासागरीय जायरों में हिन्द महासागर जायर (Indian Ocean Gyre), उत्तर अटलांटिक जायर (North Atlantic Gyre), दक्षिण अटलांटिक जायर (South Atlantic Gyre), उत्तर प्रशांत जायर (North Pacific Gyre) और दक्षिण प्रशांत जायर (South Pacific Gyre) शामिल हैं। महासागरों में पहुँच रहा कचरा किसी गतिशील वस्तु की भांति काम करते हुए इन महासागरीय जायरों जैसे घूर्णी निर्देश तंत्र में विक्षेपित होता रहता है। और इस तरह दुनिया के सभी महासागर में छोटे बड़े कचराधर बन गए हैं। इनमें प्रशांत महासागर में बना द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच पिछले कई सालों से सुर्खियों में रहा है।

प्रशांत महासागर दुनिया का सबसे बड़ा और सबसे गहरा महासागर है। एक ओर प्रशांत महासागर के पास पृथ्वी के आधे से अधिक मुक्त जल के स्वामी होने का गौरव है, वहीं दूसरी ओर दुर्भाग्यवश इसमें धरती का सबसे अधिक कचरा रखने क कलंक भी लग गया है। यह कचरा प्रशांत महासागर में समान रूप से नहीं फैला है। प्रशांत महासागर में, वास्तव में कुछ "पैसिफिक कचरा पैच" अलग-अलग आकारों के साथ-साथ अनेक स्थानों पर भी हैं, जहाँ समुद्री मलबा जमा होता जाता है। इनमें से ही द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच वर्तमान में प्रशांत महासागर में विशाल कचराघर के तौर पर दुनिया की सबसे बड़ी डंपिंग साइट की तरह उपयोग किया जा रहा है। इसमें लगातार कचरा बढ़ता ही जा रहा है। लगभग 600,000 वर्ग मील क्षेत्रफल में बने द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच का आकार अब फ्रांस, जर्मनी और स्पेन के संयुक्त क्षेत्रफल से भी बड़ा हो गया है और यह लगातार बढ़ रहा है। एक अनुमान के अनुसार इसमें लगभग 80,000 मीट्रिक टन वजन वाले प्लास्टिक के करीब 1.8 खरब टुकड़े मौजूद हैं।

अधिकांशतया जिस "ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच" की चर्चा होती है, वह पूर्वी प्रशांत कचरा पैच है। यह उत्तरी प्रशांत उपोष्ण कटिबंधीय उच्च के नाम से प्रचलित एक वायुमंडलीय क्षेत्र में हवाई और कैलिफोर्निया के बीच लगातार घूर्णन कर रहे और परिवर्तित हो रहे जलक्षेत्र में स्थित है। सीधे शब्दों में कहें, तो यह "ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच" कचराघर अमेरिका के पश्चिमी तट और एशिया के मध्य उत्तरी प्रशांत महासागर के बीचोंबीच धूमता हुआ प्लास्टिक का एक विशाल पिण्ड है। मोटे तौर पर यह 135 से 155 डिग्री पश्चिम और 35 से 42 डिग्री उत्तर के बीच के क्षेत्र में स्थित है। इसे "ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच", "द पेसिफिक ट्रैश जायर" और "पैसिफिक ट्रैश वोरटेक्स" भी कहा जाता है।

मौसम वैज्ञानिकों और भूवैज्ञानिकों का मानना है कि उत्तर प्रशांत उच्च क्षेत्र में हवा विशेष रूप से समुद्र की सतह से नीचे जाते हुए जब जलमग्न होने लगती है, तब इससे वहां वायुमंडलीय दबाव उच्च और तापमान शुष्क गर्म हो जाता है। ऐसा होने से वहाँ आमतौर पर मौसम ठीक रहता है, लेकिन उच्च दबाव वाला

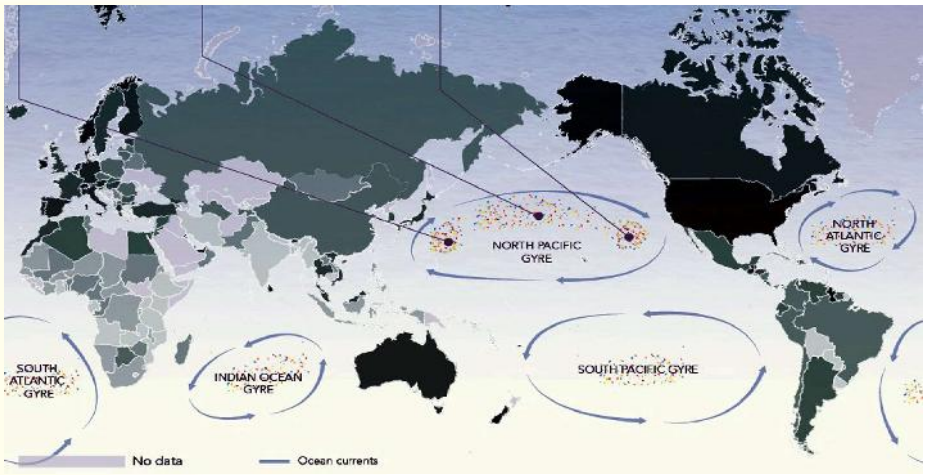


यह क्षेत्र अर्ध-स्थायी स्थिति में बना रहता है, जो समुद्र के नीचे की गति को प्रभावित करता है। उच्च दबाव वाली हवाएँ अपेक्षाकृत हल्की होती हैं और उत्तरी गोलार्ध में खुले समुद्र के ऊपर दक्षिणावर्त बहती हैं। इसके परिणाम स्वरूप समुद्रों और महासागर में तैरने वाले प्लास्टिक और अन्य मलबे उत्तरी प्रशांत उच्च के शांत आंतरिक क्षेत्र में बह जाते हैं, जहाँ मलबा महासागरीय और वायुमंडलीय बलों के कारण फँस जाता है और आसपास के जल की तुलना में उसकी सांद्रता उच्च हो जाती है। इस क्षेत्र को एक महासागरीय रेगिस्तान की संज्ञा दी जा सकती है, जो छोटे छोटे पादपप्लवकों से भरा है, साथ ही बहुत कम संख्या में कुछ बड़ी मछलियाँ या स्तनपायी भी हैं। बड़ी मछलियों और शीतल हवा की कमी के कारण, मछुआरे और नाविक शायद ही कभी जायर से होकर समुद्रीयात्रा करते हैं। धीरे धीरे महासागर में मिलने वाले ऐसे उच्च सांद्रता वाले क्षेत्र को "कचरा पैच" नाम दे दिया गया है। हालांकि संबंधित संचयित समुद्री मलबे में उपस्थित सटीक सामग्री, क्षेत्र का आकार और स्थिति अभी भी निर्धारित कर पाना वैज्ञानिकों के लिए कठिन बना हुआ है।

**वैज्ञानिकों ने 1980 के दशक के उत्तरार्ध से ही दुनिया के महासागरों में प्लास्टिक और अन्य मलबे की बढ़ती समस्या के बारे में अपनी चिंता प्रकट करना शुरु कर दिया था। परंतु ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच की तरफ दुनिया का ध्यान आकर्षित करवाने का श्रेय कप्टन चार्ल्स मूर को जाता है। कप्टन चार्ल्स मूर विश्व के जाने माने अमेरिकी समुद्र विज्ञानी और सेलबोट रेसिंग के कप्तान हैं। पहली बार वर्ष 1997 में ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच की खोज कप्टन मूर ने ही की थी।**

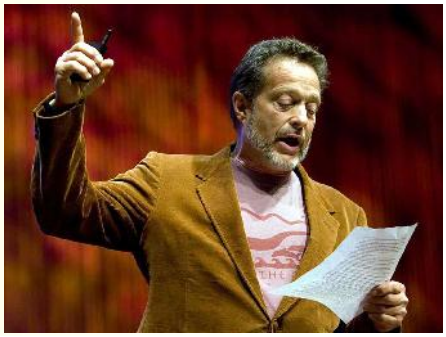

प्रशांत महासागर के दूसरी तरफ भी जापान के दक्षिण-पूर्वी तट पर एक और तथाकथित "कचरा पैच," या समुद्री मलबे का क्षेत्र बन गया है। कहा जाता है कि वर्ष 2011 में आई सूनामी के मलबे के बहने से इसका निमाण हुआ था। हालांकि इसके बारे में काफी कम जानकारी है और इस पर अध्ययन भी कम हुए हैं। इसे पश्चिमी प्रशांत कचरा पैच नाम दिया गया है। समुद्री शोधकर्ताओं का मानना है कि कुरोशियो एक्सटेंशन नामक महासागरीय धारा के दक्षिण-पूर्व में मिलने वाला यह कचरा पैच वास्तव में एक छोटे पुनःपरिसंचरण दक्षिणावर्ती घूर्णित जल वाला जायर क्षेत्र है, जो एक समुद्री भँवर के जैसा है।

देखा जाए तो वैज्ञानिकों ने 1980 के

द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच में जमा हो रहे कचरे में अधिकतर मछली पकड़ने के जाल के टुकड़े, प्लास्टिक की बोतलें, हेलमेट और अन्य प्लास्टिक चीज़ें शामिल हैं। कचरा पैच में अधिकांश प्लास्टिक का मलबा भूमि-आधारित स्रोतों से आता है और पारंपरिक प्लास्टिक जैवअपघटित नहीं होने से अपने मूलरूप में ही बना रहता है। यहाँ तक कि वर्तमान में प्रचलित जैवप्लास्टिक भी समुद्री वातावरण में जैवअपघटित नहीं हो पाता है। समुद्री वातावरण में इस जैवप्लास्टिक का केवल प्रकाशअपघटन ही होता है। इससे समय के साथ साथ बायोप्लास्टिक के बड़े टुकड़े छोटे छोटे बारीक टुकड़ों में टूट जाते हैं और कभी कभी उनका रंग भी बदल जाता है। द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच के आसपास के जल में रहने वाली छोटी-बड़ी सभी मछलियां इन प्लास्टिक टुकड़ों को अपना भोजन समझकर निगल रही हैं। इस तरह प्लास्टिक तेजी से समुद्री खाद्य जाल का एक अनपेक्षित अंग बनता जा रहा है।

दशक के उत्तरार्ध से ही दुनिया के महासागरों में प्लास्टिक और अन्य मलबे की बढ़ती समस्या के बारे में अपनी चिंता प्रकट करना शुरु कर दिया था। परंतु ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच की तरफ दुनिया का ध्यान आकर्षित करवाने का श्रेय केप्टन चार्ल्स मूर को जाता है। केप्टन चार्ल्स मूर विश्व के जानेमाने अमेरिकी समुद्र विज्ञानी और सेलबोट रेसिंग के कप्तान हैं। पहली बार वर्ष 1997 में ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच की खोज केप्टन मूर ने ही की थी। यह बात उस समय की है जब 1997 की गर्मियों में द्विवार्षिक ट्रांसपेसिफिक रेस में भाग लेने के बाद केप्टन चार्ल्स मूर अपने घर कैलिफोर्निया जाने के लिए जहाज पर हवाई से रवाना हुए। उन्होंने उत्तरी प्रशांत उपोष्णकटिबंधीय जायर से होकर जाने वाला एक शॉर्टकट रास्ता चुना, सामान्य तौर पर उस रास्ते पर कोई जहाज नहीं जाते थे। उस रास्ते पर केप्टन चार्ल्स मूर ने महसूस किया कि उनका जहाज समुद्र पर से नहीं बल्कि प्लास्टिक के बने किसी सूप पर तैरते हुए गुज़र रहा है। उस दौरान जहाज में बैठे सभी लोगों को ठोकरों जैसे झटके लगने का अनुभव भी हुआ। तब मूर ने समुद्र विज्ञानी कर्टिस एबेसेमेयर को इस बारे में पूरी जानकारी दी। कर्टिस की गिनती उन जाने माने समुद्र वैज्ञानिकों में आती है, जो महासागरीय धाराओं के विशेषज्ञ हैं और रबर डक बाथ खिलौने और टेनिस जूतों जैसी छोटी छोटी वस्तुओं से लेकर बड़े-बड़े कारगो सामानों के समुद्र में खो जाने की गतिविधियों को भली-भांति भांप लेते हैं। केप्टन मूर द्वारा प्रशांत महासागर रास्ते में मिले प्लास्टिक मलबे की बात को गम्भीरता से लेते हुए कर्टिस एबेसेमेयर ने गहन अध्ययन के बाद उस प्रशांत महासागरीय क्षेत्र को "पूर्वी कचरा पैच" (ईजीपी) घोषित किया। कैप्टन चार्ल्स मूर ने पाया कि जब वे 1998 में ठीक एक साल के बाद फिर उस स्थान से गुजरे तो समुद्री जल में मलबे का घनत्व और विस्तार दोनों बढ़ चुके थे।

''ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच" की खोज ने कैप्टन चार्ल्स मूर को महासागरीय प्रदूषण से दुनिया को मुक्त करने का एक जीवन ध्येय दे दिया। मूर ने "ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच" के बारे में पूरी दुनिया को अवगत कराने के लिए जगह-जगह विभिन्न संस्थानों, विश्वविद्यालयों और सार्वजनिक स्थलों पर भाषण देने और साथ ही संबंधित कई लेख भी लिखने शुरू किए। उनके 2003 में नैचरल हिस्ट्री नामक पत्रिका में प्रकाशित हुए एक लेख ने तो तहलका मचा दिया था। इस लेख से प्रभावित होकर स्वयं कैप्टन मूर ने कैलिफोर्निया के समुद्रतटीय जल की गुणवत्ता में सुधार के लिए वर्ष 1994 में अपने द्वारा स्थापित अल्गालिता रिसर्च फाउंडेशन नामक संगठन का मिशन ही बदल दिया। इसके बाद से यह रिसर्च फाउण्डेशन लगातार महासागरों में विशेष रूप से ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच में प्लास्टिक की समस्या के अध्ययन और प्रचार कर रहा है। इसी तरह लॉस एंजिल्स टाइम्स में गारबेज पैच के बारे में 2006 की लेखों की एक श्रृंखला ने पुलित्जर पुरस्कार जीता और इस समस्या के बारे में सामान्य जागरूकता बढ़ाई। इस मुद्दे पर कैप्टन चार्ल्स मूर ने एक पुस्तक प्लास्टिक ओशन भी लिखी है। यह पुस्तक काफी प्रसिद्ध हुई है और इससे वैज्ञानिकों को "ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच" को समझने में बड़ी सहायता मिली है। प्लास्टिक ओशन पुस्तक मानव निर्मित समुद्री मलबे से होने वाली क्षति के प्रभाव और निहितार्थ पर गम्भीर प्रश्न उठाती है। वर्तमान में अटल अवनति के क्षितिज पर खड़े महासागर का सत्य समझाती यह पुस्तक प्लास्टिक युग के इस दौर में महासागरीय परिस्थितियों के पुनर्विचार पर जोर डालती है। यह पुस्तक जागरुक मीडिया/पत्रकारिता/खोजी रिपोर्टिंग के लिए दिए जाने वाले नॉटिलस गोल्ड अवार्ड की 2012 की विजेता भी है।

प्रशांत महासागर में निर्मित द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच के गहन अध्ययनों से एक बात स्पष्टरूप से सामने आई है कि संयुक्त राज्य अमेरिका के पश्चिमी तट और जापान के पूर्वी तट से प्रशांत महासागर में पहुंचने वाले कचरे को ले जाने में उत्तर प्रशांत उपोष्ण-कटिबंधीय जायर में मिलने वाली महासागरीय धाराएं जैसे कैलिफ़ोर्निया धारा, उत्तर

विषुवतरेखीय धारा, उत्तर प्रशांत धारा और कुरोशिओ धारा शामिल हैं। इन धाराओं से निर्मित जायर के दक्षिणावर्त घूर्णन के कारण यहाँ प्लास्टिक जैसे ठोस पदार्थ आकर फंस जाते हैं। इस जायर से वास्तव में बड़े-बड़े कचराघरनुमा दो भाग पूर्वी और पश्चिमी गारबेज पैच बनते हैं। जैसा कि लेख के पहले भाग में भी यह स्पष्ट किया गया है कि लोग पूर्वी प्रशांत कचरा पैच को ही "ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच" समझते हैं। जबकि असल में पश्चिमी और पूर्वी प्रशांत कचरा पैच दोनों को सामूहिक रूप से ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच कहा जाता है। अब यहाँ यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो गई है कि पूर्वी प्रशांत कचरा पैच हवाई और कैलिफोर्निया के बीच तैरता है, जबकि पश्चिमी प्रशांत कचरा पैच जापान के पूर्व और हवाई के पश्चिम में बनता है। इन दोनों महासागरीय कचराघरों में दुनियाभर का कचरा बहता हुआ यहाँ एकत्रित हो रहा है। एक बात और गौर करने की है कि ये दोनों कचरा पैच आपस में एक पतली 6000-मील लंबी धारा से जुड़े हैं जिसे उपोष्णकटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र (Subtropical Convergence Zone) कहा जाता है। शोधों से पता चला है कि इस अभिसरण क्षेत्र में भी बड़ी मात्रा में कचरा जमा हो रहा है।

द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच में जमा हो रहे कचरे में अधिकतर मछली पकड़ने के जाल के टुकड़े, प्लास्टिक की बोतलें, हेलमेट और अन्य प्लास्टिक चीज़ें शामिल हैं। कचरा पैच में अधिकांश प्लास्टिक का मलबा भूमि-आधारित स्रोतों से आता है और पारंपरिक प्लास्टिक जैवअपघटित नहीं होने से अपने मूलरूप में ही बना रहता है। यहाँ तक कि वर्तमान में प्रचलित जैवप्लास्टिक भी समुद्री वातावरण में जैवअपधटित नहीं हो पाता है। समुद्री

**विभिन्न शोधकर्ताओं ने पाया है कि महासागरीय गारबेज पैचों में 80 प्रतिशत भाग प्लास्टिक का है, जो पूरा का पूरा तटीय भूमिभागों से ही बह्कर आ रहा है। जलयानों से भी कुछ मात्रा में मलबा गिरता रहता है। इस तरह महासागरीय कचराघर में लगातार कचरे की मात्रा बढ़ने से इसके आकार और गहराई में उसी अनुपात में परिवर्तन हो रहे हैं। अब इन कचरा पैचों की भयावहता का असर समुद्री जैवविविधता पर स्पष्टरूप से दिखने लगा है।**

वातावरण में इस जैवप्लास्टिक का केवल प्रकाश अपघटन ही होता है। इससे समय के साथ साथ बायोप्लास्टिक के बड़े टुकड़े छोटे छोटे बारीक टुकड़ों में टूट जाते हैं और कभी कभी उनका रंग भी बदल जाता है। द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच के आसपास के जल में रहने वाली छोटी-बड़ी सभी मछलियां इन प्लास्टिक टुकड़ों को अपना भोजन समझकर निगल रही हैं। इस तरह प्लास्टिक तेजी से समुद्री खाद्यजाल का एक अनपेक्षित अंग बनता जा रहा है।

विभिन्न शोधकर्ताओं ने पाया है कि महासागरीय गारबेज पैचों में 80 प्रतिशत भाग प्लास्टिक का है, जो पूरा का पूरा तटीय भूमिभागों से ही बहकर आ रहा है। जलयानों से भी कुछ मात्रा में मलबा गिरता रहता है। इस तरह महासागरीय कचराघर में लगातार कचरे की मात्रा बढ़ने से इसके आकार और गहराई में उसी अनुपात में परिवर्तन हो रहे हैं। अब इन कचरा पैचों की भयावहता का असर समुद्री जैवविविधता पर स्पष्ट रूप से दिखने लगा है। पर्यावरणविदों ने सन् 2015 से इस पर चिंता व्यक्त की थी। अतः नीदरलैंड के एक गैर-लाभकारी संगठन ओशन क्लीनअप फाउंडेशन के शोधकर्ताओं के एक दल ने वर्ष 2015 और 2016 में कैलिफोर्निया और हवाई के बीच कचरे के भंवर का सर्वेक्षण किया। साथ ही कचरा पैच के मलबे का जैवरासायनिक प्रेक्षण करना शुरू किया। इसमें द ग्रेट पेसिफिक गारबेज पैच का घनत्व अपेक्षा से बहुत अधिक पाया गया और यह भी ज्ञात हुआ कि इसमें उपस्थित प्लास्टिक प्रदूषकों को अवशोषित करते हैं, जिससे वे समुद्री जीवन के लिए जहरीले हो जाते हैं। वर्ष 2013 में स्थापित ओशन क्लीनअप फाउंडेशन एक ऐसा संगठन है जिसने विश्व के महासागरों से प्रदूषण को दूर करने को अपना दृढ़ उद्देश्य बनाया हुआ है। यह महासागरों से प्लास्टिक प्रदूषण हटाने की तकनीकें निर्मित कर रहा है। इसी साल 2019 की 7 जनवरी को एक समाचार आया कि ग्रेट पैसिफिक गारबेज पैच के अंदर प्रशांत महासागर में तैरते हुए प्लास्टिक को इकट्ठा करने के लिए द ओशन क्लीनअप द्वारा तैनात किए गए कचरा सफाई उपकरण टूट गए हैं। इस तरह की खबरों से कई बार ओशन क्लीनअप के कामों में बाधाएं भी आती हैं। पर सबसे अच्छी बात यह है कि इस तरह के दुनियाभर में काम कर रहे सक्रिय संगठनों के कारण निकट भविष्य में महासागरों में बनते जा रहे कचराधरों से मुक्ति दिलाई जा सकेगी। क्योंकि इस पीड़ा से सिर्फ प्रशांत महासागर ही नहीं गुजर रहा है, बल्कि अटलांटिक और हिंद महासागरों में भी ऐसे कचराघरों की मौजूदगी प्रमाणित हो चुकी है।

**shubhrataravi@gmail.com**

# स्वर्ण-उत्पत्ति का रहस्य : चौथी गुरूत्वीय तरंग

डॉ. कपूरमल जैन

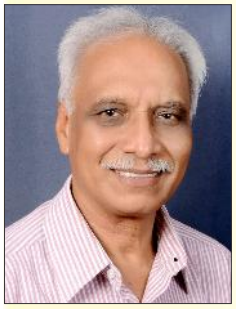

*डॉ. कपूरमल जैन वरिष्ठ विज्ञान लेखक हैं। भौतिकी शास्त्र से संबंधित लेख लिखने में वे सिद्धहस्त हैं। घर-घर में विज्ञान जैसी लोकप्रिय शृंखला भी उन्होंने लिखी है। आण्विक भौतिकी के क्षेत्र में उन्होंने शोधकार्य किया है। अब तक 225 से अधिक लेख तथा 15 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकीं हैं। डॉ. कपूरमल जैन की लोक व्यापीकरण एवं विज्ञान की शिक्षण पद्धति में नवाचार लाने में गहरी रुचि है। वे भोपाल में निवास करते हैं तथा इस दिशा में कई वर्षों से कार्य कर रहे हैं।*

17 अगस्त 2017 को 'चौथी गुरूत्वीय तरंग' को संसूचित किया गया, जिसकी अधिकारिक घोषणा सितम्बर 2017 में हुई। अब तक कुल 11 'गुरूत्वीय तरंगें' खोजी जा चुकी हैं। लेकिन, चौथी को छोड़ कर सभी 'गुरूवीय तरंगें', 'कृष्णविवर तारों' ('ब्लेक होल') की टक्करों से उत्पन्न हुई हैं। चौथी 'गुरूत्वीय तरंग'के 'न्यूट्रॉन तारों' की टक्कर से उत्पन्न होने के कारण इसकी खोज ने वैज्ञानिक जगत में एक नयी क्रांति की शुरूआत की है।

'गुरूत्वीय तरंगों' की खोज के लिए विशेष व्यवस्था स्थापित की गयी है। इसे 'लिगो' (Laser Interferometer Gravitational-Wave Observatory), जिसका नया संस्करण 'प्रगत लिगो' है, कहते हैं। इस पर काम रहे वैज्ञानिकों को गुरूत्वीय तरंग के प्रथम संकेत 14 सितम्बर 2015 को मिले। लेकिन, यह तुक्का भी हो सकती थी। अतः घोषणा के पूर्व अवलोकनों को ठीक से जाँचने-परखने के बाद जब वैज्ञानिकों को पक्का भरोसा हो गया तब उन्होंने 11 फरवरी 2016 को प्रथम गुरूत्वीय तरंग के खोजे जाने की घोषणा की। इसे गुरूत्वीय तरंग (GW150914) नाम दिया गया। इस खोज के आधार पर वैज्ञानिकों ने प्रकृति की उस भाषा को समझ लिया, जिससे हमारी जान सकने वाली सीमाओं से परे घट रही अगम्य घटनाओं को जानने की भी प्रबल संभवना जाग गयी। इस तरह 'गुरूत्वीय तरंगों' की यह खोज इतनी महत्त्वपूर्ण और क्रांतिकारी थी कि इसे मई 2016 में 'मूलभूत भौतिकी' का प्रतिष्ठित 'विशेष ब्रेकथ्रू प्राइज' के लिए चुना गया तथा इसके बाद सन् 2017 में भौतिकी के नोबेल पुरस्कार के लिए भी चुना गया। इस खोज के बाद इन तरंगों की खोज का सिलसिला आरंभ हो गया। प्रथम 'गुरूत्वीय तरंग' को प्राप्त करने के बाद 17 अगस्त 2017 तक तीन और 'गुरूत्वीय तरंगों' (GW151226, GW170104 तथा GW170814) को प्राप्त किये जाने की घोषणा हुई।

## चौथी गुरूत्वीय तरंग की खोज

चौथी 'गुरूत्वीयतरंग' को पहले 'प्रगत लिगो' के 'लिविंगस्टोन' वेधशाला में और फिर इसके 6 मिलीसेकण्ड के बाद 'हेनफोर्ड' में रिकार्ड किया गया। इसके 6 मिली सेकण्ड के बाद इटली में स्थापित 'वर्गो' वेधशाला, जिसे इटली, फ्रांस, नीदरलैण्ड, पोलैण्ड, हंगरी और स्पेन ने मिल कर 'पीसा' के पास स्थापित किया है, के द्वारा भी संसूचित किया गया। सभी स्थानों पर यह तरंग सबसे अधिक शक्तिशाली संकेत के रूप में मिली।

चौथी 'गुरूत्वीय तरंग' को रिकार्ड करने के पूर्व 'एक्स किरणों' की एक चमक पृथ्वी के 'कृत्रिम उपग्रहों' द्वारा रिकार्ड की गई। और, फिर इसके लगभग दो सेकण्ड के बाद 'गुरूत्वीय तरंगें' पृथ्वी पर पहुँची। इन दोनों प्रकार की तरंगों का लगभग एक-साथ पहुँचना यह प्रमाणित करता है कि ये दानों एक समान वेग से चलती हैं, जैसा कि आईंस्टीन ने अपने 'सापेक्षता के सामान्य सिद्धांत' में बताया था।

## घटना का पुर्नसृजन और चौथी गुरूत्वीय तरंग का विश्लेषण

वैज्ञानिकों ने घटना का पुनर्सृजन कर गणना की और बताया कि चौथी 'गुरूत्वीय तरंग' का स्रोत

पृथ्वी से करीब 1300 लाख प्रकाशवर्ष दूर ही स्थित था। यह स्रोत दो 'न्यूट्रॉन तारों' की टक्कर के बाद उनके एक होने की प्रक्रिया के दौरान निर्मित हुआ था। एक-दूसरे के परितः घूमते इन न्यूट्रॉन तारों को करीब सौ सेकण्ड तक ही वैज्ञानिक ट्रेक कर सकते थे। फिर, एक दूसरे के करीब आते हुए ये टकराये। इस दौरान इन्होंने ऊच्च-ऊर्जा के विकिरण उत्सर्जित किये।

इस तरह चौथी 'गुरूत्वीय तरंग' को उत्पन्न करने वाली यह घटना 'किलोनोवा' (Kilonova) से संबंधित थी। न्यूट्रॉन तारों के मिलन के समय होने वाले विस्फोट को 'किलोनोवा' कहते हैं। इसे वैज्ञानिकों ने उसी रात संसूचित किया। कुछ दिन बाद जब फिर उस 'लोकेशन' को देखा गया तब वह तारा मंद होता हुआ मिला, जिसमें विस्फोट हुआ था। इस 'लोकेशन' की सही-सही जानकारी मिलने का बहुत बड़ा लाभ तत्काल मिला। विश्व की विभिन्न वेधशालाओं को संदेश भेज दिया गया, ताकि सब अपने टेलीस्कोप की दिशा को उस ओर फोकस कर सकें, जहाँ टक्कर हुई है। इससे टक्कर के बाद मिलने वाले विद्युत चुम्बकीय ऊर्जा की विभिन्न 'स्पेक्ट्रल-परास' में मिलने वाले विकिरणों का अध्ययन कर अधिक से अधिक जानकारियाँ प्राप्त करने में सहायता मिल सके। इसके साथ ही वैज्ञानिकों ने अंतरिक्ष में स्थापित 'हबल टेलीस्कोप' तथा 'चंद्रा एक्सरे वेधशाला' को भी 'किलोनोवा' पर फोकस किया और इसकी सहायता से 'न्यूट्रॉन तारों' के मिलन से हो रहे सृजन की एक झलक देखी। हो सकता है कि मिलन के बाद यह 'कृष्णविवर' बन गया हो। लेकिन, अभी इस बारे में निश्चिततापूर्वक कुछ कहा नहीं जा सकता है।

वैज्ञानिकों ने महसूस किया कि 'न्यूट्रॉन तारे' से मिलने वाली तरंग का मापन उतना ही क्रांतिकारी है जितना 'कृष्णविवर' से उत्पन्न होने वाली पहली तीन तरंग का मापन था। क्योंकि, इस घटना के साथ जो विभिन्न विकिरण उत्सर्जित होते हैं, उन्हें 'कृष्णविवर' तो अपने में से बाहर निकलने नहीं देता है। लेकिन, 'न्यूट्रॉन तारों' से संदेशों के रूप में बहुत कुछ बाहर निकलता है। इसने 'मल्टी-मैसेंजर एस्ट्रोनॉमी' को जन्म दिया।

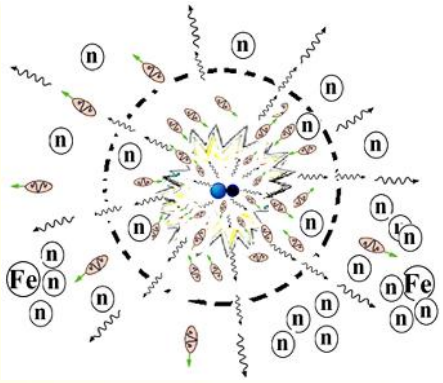


**गुरूत्वीय तरंगों का महत्त्व निर्विवादित रूप से स्थापित हो गया। अब इनकी खोज के लिए वैज्ञानिक पृथ्वी के विभिन्न भागों में संसूचकों को स्थापित करना चाहते हैं। वर्तमान में ये अमरीका, इटली और जर्मनी में स्थापित है। 'लिगो' की ही तरह भारत में भी एक वेधशाला के निर्माण का कार्य प्रगति पर है, जो वर्तमान में संचालित अमरीका की ऑब्जर्वेटरीज़ के साथ मिल कर कार्य करेगी। विश्व में कई और परियोजनाओं पर भी कार्य चल रहा है। इनके पूरा होते ही संसूचकों के जाल से इनके संसूचन में तेजी आएगी तथा क्षमता में वृद्धि होगी।**

## 'मल्टी-मैसेंजर एस्ट्रोनॉमी'

चौथी 'गुरूत्वीय तरंग' की खोज से'खगोलिकी' के क्षेत्र में 'मल्टी-मैसेंजर एस्ट्रोनॉमी' नामक नयी विधा की शुरूआत हुई। यह किसी खगोलीय घटना के दौरान डाटा के रूप में मिलने वाले विभिन्न प्रकार के संदेशों को पढ़ने और विश्लेषित करने के लिए प्रयुक्त की जाने वाली समन्वित अध्ययन की विधा है। ये संदेश विद्युतचुम्बकीय तरंगों, ग्रेविटेशनल तरंगों, न्यूट्रिनो आदि में कोडित हो सकते हैं। इन संदेशों को डिकोड कर घटना से जुड़ी विभिन्न जानकारियों को विश्वासपूर्वक तरीके से हांसिल किया जाता है। घटना का संबंध सुपरनोवा, अनियमित न्यूट्रॉन तारे, तारों की टक्कर, गामा किरण प्रस्फोट (गामा रे बर्स्ट), सक्रिय मंदाकिनीय केंद्र (एक्टिव गेलेक्टिक न्यूक्लिया), आपेक्षिकीय प्रधार (रिलेटिविस्टिक जेट) आदि से हो सकता है। चौथी 'गुरूत्वीय तरंग' की खोज के दौरान प्राप्त डाटा और संदेशों से कई अहम जानकारियाँ मिली हैं।

## `गामा रे बर्स्ट' के संबंध में बड़ा खुलासा

चौथी 'गुरूत्वीय तरंग' की खोज के दौरान प्राप्त डाटा और संदेशों के विश्लेषण अब तक रहस्य साबित हो रहे 'गामा किरण प्रस्फोट' के संबंध में एक बड़ा खुलासा हुआ। ये प्रस्फोट बहुत ही शक्तिशाली ऊर्जा-उत्सर्जन के केंद्र होते हैं। इन्हें जब-तब दूरस्थ आकाशगंगाओं में देखा गया है। ये बहुत कम समय (कुछ मिलीसेकेण्ड से लगा कर मिनट) तक अस्तित्व में रहते हैं। लेकिन, इस अल्पावधि में ही इनसे इतनी अधिक ऊर्जा उत्सर्जित हो जाती है, जितनी कि सूर्य अपने सम्पूर्ण जीवन-काल में करता है। अब वैज्ञानिकों को यह स्पष्ट समझ में आ गया कि उपग्रहों द्वारा अक्सर देखे जाने वाले 'गामा किरण प्रस्फोट' एक-दूसरे के करीब आ रहे 'न्यूट्रॉन तारों' और उनके टकराने की वजह से पैदा होते हैं।

## पृथ्वी पर मिलने वाले भारी और बेशकीमती तत्वों के निर्माण की जन्म-स्थली

चौथी 'गुरूत्वीय तरंग' की खोज के साथ ही इस घटना के दौरान उत्पन्न होने वाली विद्युतचुम्बकीय तरंगों के अध्ययन से ऐसे स्पष्ट 'स्पेक्ट्रल संकेत' मिले, जिनसे यह तथ्य स्थापित हुआ कि 'किलोनोवा' लोहे से भारी 'सोने', तथा 'प्लेटिनम' जैसे पृथ्वी पर मिलने वाले भारी और बेशकीमती तत्वों के निर्माण का जन्म-स्थल भी है। 'किलोनोवा' की घटना के समय कुछ 'न्यूट्रॉन-पदार्थ' आसपास के वातावरण में बिखरता है। इस कारण यहाँ 'न्यूट्रॉनों' की संख्या में बहुत अधिक बढ़ोतरी हो जाती है। इस न्यूट्रॉन-आधिक्य वाले स्थान पर पहले से ही उपस्थित लोहे जैसे तत्वों के नाभिक तेजी से न्यूट्रॉनों का प्रग्रहण करने लगते हैं। अब अगर ये नाभिक रेडियोधर्मी तरीके से क्षय होने के पहले ही दूसरे न्यूट्रॉन को प्रग्रहण (केप्चर) करने में सफल हो जाते हैं तो लोहे से भारी तत्वों का निर्माण आरंभ हो जाता है। वैज्ञानिकों ने इस प्रक्रिया को आर-प्रोसेस (रेपिड न्यूट्रॉन केप्चर प्रोसेस) नाम दिया। चौथी गुरूत्वीय तरंग के मापन इस प्रोसेस के अस्तित्व को प्रमाणित कर दिया तथा स्पष्ट कर दिया कि

'किलोनोवा' की घटना के दौरान लोहे से भारी रासायनिक तत्वों का संश्लेषण होता है। अब तक वैज्ञानिकों को यह जानकारी तो थी कि तारों के केंद्र में 'नाभिकीय संलयन' की क्रियाओं से हीलियम, बेरीलियम, कार्बन आदि जैसे भारी तत्त्वों का निर्माण होता है। लेकिन, लोहे से भारी 'सोने' तथा 'प्लेटिनम' का बनना रहस्य था। अब यह रहस्य खुल गया है।

## संसूचकों का जाल -अन्य और वेधशालाएं

गुरूत्वीय तरंगों का महत्त्व निर्विवादित रूप से स्थापित हो गया। अब इनकी खोज के लिए वैज्ञानिक पृथ्वी के विभिन्न भागों में संसूचकों को स्थापित करना चाहते हैं। वर्तमान में ये अमरीका, इटली और जर्मनी में स्थापित है। 'लिगो' की ही तरह भारत में भी एक वेधशाला के निर्माण का कार्य प्रगति पर है, जो वर्तमान में संचालित अमरीका की ऑब्जर्वेटरीज़ के साथ मिल कर कार्य करेगी। विश्व में कई और परियोजनाओं पर भी कार्य चल रहा है। इनके पूरा होते ही संसूचकों के जाल से इनके संसूचन में तेजी आएगी तथा क्षमता में वृद्धि होगी।

अमरीका, इटली तथा जर्मनी की वेधशालाओं के साथ 'लिगोइंडिया' 5वीं वेधशाला होगी, जो सबसे अधिक सुग्राही होगी। आशा है कि सन् 2024 तक यह काम करना शुरू कर देगी। इस तरह आने वाले निकट भविष्य में 5 संसूचक ऑनलाइन तैयार रहेंगे। इनके साथ ही एक अति महत्वाकांक्षी परियोजना 'लिसा' (लेसर इंटरफेरोमीटर स्पेस एंटेना) पर कार्य चल रहा है। इसके अलावा 'यूनिवर्सिटी ऑफ टोक्यो' की 'इंस्टीट्यूट फार कॉस्मिक रे रिसर्च' में 'काग्रा' (कामिओका ग्रेविटेशनल वेव डिटेक्टर) परियोजना पर कार्य चल रहा है। यह इतने अधिक अंतरिक्ष के क्षेत्र को स्केन करेगा कि इससे हमें करीब 10 सिग्नल प्रति वर्ष मिलने लगेंगे। इस तरह आने वाले समय में जब अंतरिक्ष में स्थापित दूरदर्शी भी मौजूद रहेंगे, तब गुरूत्वीय तरंग खगोलिकी (एस्ट्रोनॉमी) अपनी पूरी क्षमता के साथ सम्पूर्ण रंग में नजर आएगी तथा प्रकृति के अकल्पनीय रहस्यों को उजागर करने लगेगी।

## परवान चढ़ती आशाएं और संभावनाएं

गुरूत्वीय तरंगों की खोज से वैज्ञानिक बहुत उत्साह में हैं। आशा है कि अब उन्हें वे

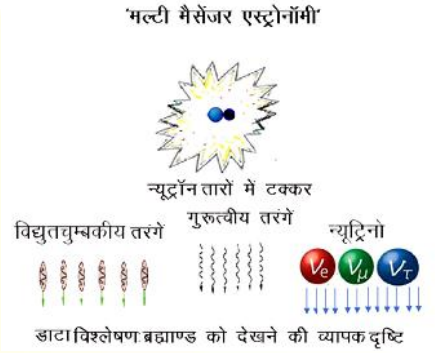


**अभी तक हमने जिन `गुरूत्वीय तरंगों' को प्राप्त किया है, वे प्राकृतिक घटनाओं से उत्पन्न हुई हैं। इन तरंगों का एक वृहद स्पेक्ट्रम होता है, जिसमें एक मीटर के करोड़वें भाग ($10^{-7}$ मीटर) से ले कर दस अरब मीटर ($10^{11}$ मीटर) लम्बी तरंगें होती हैं। वैज्ञानिकों को आशा है कि वे निकट भविष्य में इन्हें नियंत्रित तरीके से प्रयोगशाला में भी उत्पन्न करने में सफल होंगे।**

जानकारियाँ मिलने लगेंगी, जिनको अब तक वे मान कर बैठे थे कि इन्हें प्रकृति हमारे साथ बाँटना नहीं चाहती हैं। अभी तक वैज्ञानिकों द्वारा किये गये अध्ययन से कई नयी संभावनाएं सामने आई हैं। इनमें से कुछ इसप्रकार हैं -

'बिगबैंग' के बाद ब्रह्माण्ड तीव्र 'फुलाव' के दौर से गुज़रा है। अगर सभी दिशाओं में यह आरंभिक 'फुलाव' सममित नहीं रहा होगा तो इससे भी 'गुरूत्वीय तरंगें' पैदा हुई होंगी, जिसे आज भी 'अवशेषात्मक प्रतीक' के रूप में गुरूत्वीय विकिरण के रूप में मौजूद रहना चाहिए। वैज्ञानिकों को आशा है कि जिस तरह सन 1965 में पेंजिऑस तथा विल्सन ने बिगबैंग के 'अवशेषात्मक प्रतीक' को 'माइक्रोवेव पृष्ठभूमि' के रूप में प्राप्त किया था, उसीतरह 'गुरूत्वीय तरंग पृष्ठभूमि' के रूप में भी इसे संसूचित कर पाना संभव हो सकता है। ऐसा होने पर वैज्ञानिकबिगबैंग से 'बेबी- ब्रह्माण्ड' बनने की कहानी को गढ़ने में सफल हो सकेंगे।

अभी तक 'कृष्णविवर' तथा 'न्यूट्रॉन तारों' जैसे अदृश्य खगोलीय पिण्ड भी अब दृश्य पिंड बन कर सामने आये हैं। अब वैज्ञानिकों को कुछ और नये आकाशीय पिण्डों तथा ऊर्जा स्रोतों को भी खोजे जाने की भी आशा है।

इन तरंगों पर स्रोत या प्रेक्षक के बीच सापेक्षीय गति के कारण उत्पन्न होने वाले 'डॉप्लर प्रभाव' को भी देखे जाने की उम्मीद है।

अभी तक के सारे प्रमाण आईंस्टीन के सापेक्षता के सामान्य सिद्धांत के पक्ष में ही हैं। लेकिन, हो सकता है कि अब ऐसा कुछ मिल सकता है जिससे इसे संशोधित करने तथा और बेहतर बनाने के सूत्र मिल जाएं।

'अंध पदार्थ' (डार्कमेटर) के बारे में अब तक कोई प्रामाणिक जानकारी नहीं मिली है। ब्रह्माण्ड में करीब 23 प्रतिशत पदार्थ 'अंध पदार्थ' के रूप में मौजूद है। चूँकि पदार्थ गुरूत्व पैदा करता है, अतः 'अंध पदार्थ' का पता लगाने में गुरूत्वीय तरंगों के अध्ययन से वैज्ञानिकों को बहुत आशा है।

'कॉस्मिक स्ट्रिंग' दिक्काल में सिलवट के रूप में होती है। इसमें बहुत अधिक ऊर्जा संघनित रह सकती है। वैज्ञानिकों को आशा है कि वे 'गुरूत्वीय तरंग एस्ट्रोनॉमी' से अध्ययन के दौरान इनके प्रमाण भी प्राप्त कर सकते हैं।

अभी तक हमने जिन 'गुरूत्वीय तरंगों' को प्राप्त किया है, वे प्राकृतिक घटनाओं से उत्पन्न हुई हैं। इन तरंगों का एक वृहद स्पेक्ट्रम होता है, जिसमें एक मीटर के करोड़वें भाग ($10^{-7}$ मीटर) से ले कर दस अरब मीटर ($10^{11}$ मीटर) लम्बी तरंगें होती हैं। वैज्ञानिकों को आशा है कि वे निकट भविष्य में इन्हें नियंत्रित तरीके से प्रयोगशाला में भी उत्पन्न करने में सफल होंगे। इस तरह अब हम निश्चित ही एक नये दौर में प्रवेश कर रहे हैं जहाँ हम 'मल्टी-मैसेंजर एस्ट्रोनॉमी' के जरिये ब्रह्माण्ड की नई भाषाओं को पढ़ने और समझने लगे हैं। अतः इस सदी में हमारे सामने ब्रह्माण्ड के बारे में कई रहस्योद्घाटन होने जा रहे हैं। फिलहाल लीगो और वर्गो संसूचक का काम रोक दिया गया है। 2019 में ये फिर से अपना कार्य आरंभ कर देंगें। आशा है, इसके बाद कई और तरंगों की खोज होंगी तथा इनके सिग्नेचरों के विश्लेषण से ब्रह्माण्ड के उद्गम के बारे में कई रहस्य उजागर होंगे।

kapurmaljain2@gmail.com

# मृदा को स्वस्थ रखने की आवश्यकता

डॉ. दिनेश मणि

*डॉ. दिनेश मणि विगत तीन दशक से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। विज्ञान के लोकप्रियकरण में उनका उल्लेखनीय योगदान है। अब तक आपकी हिन्दी में 28 और अंग्रेजी में 6 पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। 35 शोध पत्र और लगभग 700 विज्ञान आलेख प्रकाशित हुए हैं। आपके निर्देशन में 12 शोध छात्रों को डॉक्टरेट की उपाधि मिल चुकी है। विज्ञान की महत्वपूर्ण मासिक पत्रिका 'विज्ञान' के संपादक रहे दिनेश मणि इलाहाबाद में रहते हैं।*

आधुनिक खेती में खाद्यान्न फसलों की बौनी, अर्ध-बौनी व संकर किस्मों, सघन कृषि प्रणाली जैविक खादों के उपयोग में कमी, रासायनिक उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग तथा कृषि रसायनों के अत्यधिक प्रयोग का मृदा के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। मृदा में अत्यधिक एवं असंतुलित कृषि रसायनों के प्रयोग से मृदा भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में भी बदलाव आया है जिसका प्रभाव मृदा पर उगाई जाने वाली फसलों पर पड़ा है। निःसंदेह, उपरोक्त कारकों से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है लेकिन कृषि रसायनों का मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव होने से मृदा उतपादकता कम होती जा रही है। मृदा स्वास्थ्य से आशय है कि मृदा भी भौतिक रासायनिक एवं जैविक दशायें फसलोत्पादन के अनुकूल बनी रहे। टिकाऊ एवं सतत उत्पादन के लिए आवश्यक है कि भूमि को स्वस्थ बनाए रखा जाए जिससे हम वर्तमान जनसंख्या की खाद्यान्न आपूर्ति के साथ-साथ भविष्य की संततियों की आवश्यकता का भी ध्यान रखें।

प्रायः पर्यावरण प्रदूषण की चर्चा करते समय वायु प्रदूषण तथा जल प्रदूषण पर विशेष बल दिया जाता है परंतु मृदा प्रदूषण का प्रायः कम ही उल्लेख होता है, किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि मृदा कम प्रदूषित है। मृदा प्रदूषित तो है लेकिन मृदा का स्वामी किसान अभी तक उससे अनभिज्ञ है। मृदा को वह अशुद्धियों को शुद्ध बनाने वाली तथा गंध, रंग आदि को दूर करने वाली मानता है। कुछ हद तक उसकी बात सही भी है, किंतु अधिक अन्न उगाने के लिए मृदा में जिस प्रकार उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग हो रहा है और सिंचाई करने के लिए जल के जिन दूषित स्रोतों का उपयोग किया जा रहा है उससे मृदा प्रदूषित हुई है और भविष्य में उसके और अधिक प्रदूषित होने की संभावना है, फिर भी किसान देश की बढ़ती जनसंख्या के लिए अन्न, सब्जियाँ, फल-फूल उत्पन्न करने की होड़ में सभी तरह के जल का प्रयोग करने को बाध्य हुआ है, चाहे वह शहरों का गंदा मल-जल (सीवेज) हो या रेगिस्तानी क्षेत्रों का खारा जल। वास्तव में सिंचाई के साधनों की कमी के कारण तथा मल-जल के सस्ता पड़ने के कारण किसान इसका उपयोग करता है, यदि इसका एक बार उपयोग करना होता तो बात दूसरी थी, किंतु दूषित जल से बार-बार सिंचाई करने से खेतों की मृदा में अनेक ऐसे पदार्थ संचित होते हैं तो अंततोगत्वा हानिकारक सिद्ध होते हैं।

मृदा एक अति महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। विकास और समृद्धि के मापदंड को तय करते समय वर्तमान समाज के भविष्य की संभावनाओं पर भी विचार किया जाना चाहिए। आज सम्पूर्ण विश्व आधुनिक कृषि पद्धति के गंभीर संकट से प्रभावित है। दोषपूर्ण कृषि क्रियाओं के कारण मृदा के स्वास्थ्य एवं उपजाऊपन में कमी, फसल उत्पादों की गुणवत्ता में कमी, वैश्विक तापन मौसम की विषमतायें एवं उत्पादकता में कमी जैसी समस्यायें सामने आ रही हैं। साथ ही खेती में कृषि रसायनों के अत्यधिक इस्तेमाल से वायु, जल और मृदा प्रदूषण में लगातार वृद्धि हो रही है, जिसके परिणाम स्वरूप मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

पृथ्वी को अन्नपूर्णा कहा गया है, पृथ्वी की अनेक प्रकार से स्तुतियां की गई हैं और हमारे पूर्वजों ने ध्यान रखा था कि पृथ्वी से उतना ही लिया जाए जितने की आवश्यकता है, उसका अतिदोहन न हो, किन्तु वर्तमान युग में, विशेषकर औद्योगीकरण के फलस्वरूप पृथ्वी के समस्त संसाधनों का निर्ममतापूर्वक दोहन हुआ है। खानों का कोयला, खनिज सभी अन्तिम सांसें ले रहे हैं। प्रगति के दौर में प्लास्टिक जैसी सामग्री का आविष्कार करके वैज्ञानिकों ने जनता के उपयोग हेतु ऐसा पदार्थ प्रदान किया है, जिसका अपशिष्ट सदियों तक विघटित न होकर मृदा के पृष्ठ पर पड़ा रह सकता है।

फसलोत्पादन की वृद्धि से सम्बन्धित समस्याएं सर्वत्र विद्यमान हैं। सामान्यतया अच्छी मृदाएं उन देशों में नहीं हैं जिन देशों की जनसंख्या बहुत अधिक है, किन्तु वहाँ उनकी अत्यधिक आवश्यकता है। हरित क्रांति के साथ फसल उत्पादकता में जो वृद्धि हुई, वह अब स्थिर सी हो गई है। सघन खेती के परिणाम स्वरूप उत्पन्न पर्यावरणीय समस्याओं, प्रभावों ने अनेक देशों की उपलब्धियों को शिथिल किया है। पेयजल में नाइट्रेट एवं खाद्य पदार्थों में जीवनाशी अवशेषों की संभावित विद्यमानता जन समुदाय के लिए समस्या बन गई है और वे आधुनिक खेती पर प्रश्न चिह्न बनने लगी है।

सम्पूर्ण विश्व पर्यावरण तथा प्राकृतिक संसाधनों के खतरों को लेकर विशेषकर मृदा तथा जल को लेकर चिंतित है। जो प्रौद्योगिकी पहली दृष्टि में वरदान सिद्ध हुई, वही अब एक प्रकार की विडम्बना को जन्म दे चुकी है। इसने जीवन स्तर को सुधारा किन्तु पर्यावरण की गुणवत्ता में कमी स्पष्ट दिख रही है। किसानों के लिए सिंचाई वरदान प्रतीत हुई जब उसके अनुपजाऊ खेत लहलहाने लगे किन्तु वही सिंचाई कालांतर में अभिशाप बन गई जब चारों ओर ऊसर ही ऊसर बन गए। इसी तरह उर्वरकों तथा पीड़कनाशियों के आने से जहाँ कृषीय उपज में आशातीत वृद्धि हुई, वहीं इनके निरंतर उपयोग ने खतरा उत्पन्न कर दिया। जनसंख्या की बेतहाशा वृद्धि ने मृदा के अधिकाधिक उपयोग के लिए प्रेरित किया, जिससे मृदा का ह्रास होना शुरू हुआ। आधुनिक कृषि निवेशमयी और प्रौद्योगिकी मय है जिसके फलस्वरूप मृदा आमजन की चिन्ता का विषय बन चुकी है।

पृथ्वी को अन्नपूर्णा कहा गया है, पृथ्वी की अनेक प्रकार से स्तुतियां की गई हैं और हमारे पूर्वजों ने ध्यान रखा था कि पृथ्वी से उतना ही लिया जाए जितने की आवश्यकता है, उसका अतिदोहन न हो, किन्तु वर्तमान युग में, विशेषकर औद्योगीकरण के फलस्वरूप पृथ्वी के समस्त संसाधनों का निर्ममतापूर्वक दोहन हुआ है। खानों का कोयला, खनिज सभी अन्तिम सांसें ले रहे हैं। प्रगति के दौर में प्लास्टिक जैसी सामग्री का आविष्कार करके वैज्ञानिकों ने जनता के उपयोग हेतु ऐसा पदार्थ प्रदान किया है, जिसका अपशिष्ट सदियों तक विघटित न होकर मृदा के पृष्ठ पर पड़ा रह सकता है। स्थिति गंभीर हो चुकी है। जिस तरह पूरे विश्व में नाभिकीय ऊर्जा प्राप्त करने के लिए रिएक्टर लगाए जा रहे हैं, उनके क्षतिग्रस्त होने पर प्रचुर रेडियोधर्मिता चतुर्दिक पर्यावरण को प्रदूषित करती है, रेडियोएक्टिव धूल में $^{90}Sr$ आइसोटोप रहते हैं, जो पृथ्वी पर धूल के गिरने पर मृदा के कणों से बंध जाते हैं और धीरे-धीरे वनस्पतियों द्वारा अवशोषित होकर पशुओं के शरीर के भीतर पहुँचकर उन्हें रोगग्रस्त कर देते हैं। यह देखा गया है कि $^{90}Sr$ का उद्ग्रहण चूना डाली गई मृदा की तुलना में अम्लीय मृदाओं में ज्यादा होता है।

इस तरह मृदा पर चतुर्दिक मार पड़ी रही है- वायु, जल, रसायन, सबों ने उसे विषाक्त बना दिया है। ऐसा नहीं है कि रूग्ण मृदा स्वस्थ नहीं बन सकती है, किन्तु इसके लिए विशेष उपचार- दीर्घकालीन प्रबंधन की आवश्यकता होगी। मृदा को रूग्ण रहने भी नहीं दिया जा सकता। उसी से राष्ट्र की जनसंख्या की उदर पूर्ति भी होनी है। अतः मृदा स्वास्थ्य के प्रति सतर्कता की आवश्यकता है। आधुनिक सभ्यता- 'इस्तेमाल करो और फेंको' के कारण मृदा पर सभी प्रकार का प्रदूषण बढ़ा है। उस पर अथाह कूड़ा कचरा लादा जा रहा है, उसके जल स्रोतों को विषाक्त बनाया जा रहा है। 'जिओ और जीने दो' के मंत्र को अपनाये बिना मृदा स्वस्थ नहीं रह सकती और यदि मृदा स्वस्थ नहीं होगी तो वह अपने राष्ट्रवासियों की उदरपूर्ति नहीं कर पायेंगी। मृदा के जीव-जन्तु हमारी ही तरह सांस लेते और जल का उपयोग करते हैं। जलवायु तथा जल दोनों ही प्रदूषित हो चुके हों तो स्वस्थ पादप जीवन या सूक्ष्मजीवों के जीवित रहने की आशा करना व्यर्थ है। स्पष्ट है कि मृदा अस्वस्थ हो चुकी है या हो रही है।

मृदा स्वास्थ्य का एक अन्य पक्ष मृदा का अपरदन भी है। मृदा शैलों के अपक्षय से बनती है, उसके पूर्ण विकास में हजारों वर्ष लग जाते हैं किन्तु अपरदन एक ऐसा रोग है जिससे मृदा की ऊपरी सतह का इतनी तेजी से निक्षालन होता है जिससे मृदा के सूक्ष्म कण बह जाते हैं और मृदा धीरे-धीरे अनुर्वर हो जाती है। यह भी मृदा रूग्णता ही है। मृदा स्वास्थ्य का अर्थ मृदा में पर्याप्त वातन होना, उसमें पर्याप्त जल होना तथा पोषक तत्वों का यथेष्ट मात्रा में विद्यमान होना। आज जब वायुमंडल प्रदूषित है तो यह सम्भव नहीं है कि मृदा वायु दूषित न हुई

**भविष्य में कृषि भूमि के क्षेत्रफल के बढ़ने की संभावना नगण्य है। अतः फसल उत्पादन में और अधिक वृद्धि प्राकृतिक संसाधनों जैसे मृदा एवं जल तथा कृषि उपादानों के बेहतर प्रबंधन द्वारा ही संभव है। यदि मृदा के प्रदूषण नियंत्रण तथा प्रबंधन पर समुचित ध्यान नहीं दिया गया तो आने वाले वर्षों में भुखमरी, कुपोषण और कुपोषण जनित बीमारियों का सामना करना पड़ सकता है।**

हो क्योंकि वाह्य वायुमंडल से मृदा वायु का निरन्तर आदान-प्रदान होता रहता है, जिस गति से औद्योगीकरण हुआ है, उसका सबसे बड़ा दुष्परिणाम हुआ है, वायु में कार्बन डाई ऑक्साइड के अलावा सल्फर डाई ऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड जैसी विषैली गैसों में वृद्धि। मृदा वायु में पहले से कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा अधिक रहती है जो कभी-कभी पौधों के लिए विषाक्त बन जाती है। वायुमंडल की इन विषैली गैसों के मृदा वायु में सम्मिलित हो जाने से मृदा जीवाणु बुरी तरह से प्रभावित हो सकते हैं।

जल को जीवन कहा गया है, मृदा जल भी पौधों तथा सूक्ष्म जीवों के लिए उतना ही आवश्यक है जितना मनुष्य के लिए प्राकृतिक जल। चूँकि इस समय पृथ्वी की सतह पर का जल ही नहीं भौम जल भी बुरी तरह से विषैली मात्रा में यौगिकों से युक्त है अतः पेड़-पौधों को उस विषाक्त जल पर निर्भर रहना पड़ रहा है।

मृदा को स्वच्छ एवं स्वस्थ रखने में मृदा सूक्ष्मजीवों की महती भूमिका है। बहुत हद तक ये मृदा में प्रविष्ट होने वाले कार्बनिक अपशिष्टों का विघटन करके उपयोगी पोषण तैयार करते हैं किन्तु अब ऐसे औद्योगिक या रासायनिक अपशिष्टों को मृदा में इतनी बड़ी मात्रा में डाला जा रहा है कि सूक्ष्मजीव इसे विघटित करने में असमर्थ हैं। स्पष्ट है मृदाएं धीरे-धीरे रूग्ण बनती जा रही हैं। सभ्य मानव को अपनी रूग्णता की ज्यादा परवाह है, मृदा रूग्णता के विषय में वह सोच भी नहीं पा रहा है, ऐसी विषम स्थिति में मृदाओं का विशेषकर महानगरों के आसपास की मृदाओं का बुरी तरह से प्रदूषित हो कर रूग्ण या अस्वस्थ होना कोई बड़ी बात नहीं होगी। भविष्य में कृषि भूमि के क्षेत्रफल के बढ़ने की संभावना नगण्य है। अतः फसल उत्पादन में और अधिक वृद्धि प्राकृतिक संसाधनों जैसे मृदा एवं जल तथा कृषि उपादानों के बेहतर प्रबंधन द्वारा ही संभव है। यदि मृदा के प्रदूषण नियंत्रण तथा प्रबंधन पर समुचित ध्यान नहीं दिया गया तो आने वाले वर्षों में भुखमरी, कुपोषण और कुपोषणजनित बीमारियों का सामना करना पड़ सकता है।

मृदा में कृषि रसायनों के अत्यधिक एवं असंतुलित इस्तेमाल से मृदा के भौतिक रासायनिक एवं जैविक गुणों में बदलाव आया है, जिसका प्रभाव ऐसी मृदा में उगाई जाने वाली फसलों पर पड़ा है। निःसंदेह, इन कृषि रसायनों के इस्तेमाल से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है लेकिन मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर पड़ने से मृदा उत्पादकता कम होती जा रही है। मृदा स्वास्थ्य से आशय है कि मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशायें सतत फसलोत्पादन के अनुकूल बनी रहें। सतत उत्पादन के लिए आवश्यक है कि मृदा को स्वस्थ बनाये रखा जाय जिससे हम वर्तमान की जनसंख्या की खाद्यान्न आपूर्ति के साथ-साथ भविष्य की संततियों की आवश्यकता को भी पूरा करने में सक्षम हो सकें।

dineshmanidsc@gmail.com

*डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती का जन्म 11 जुलाई 1937 को ग्वालियर में हुआ। एम.एस-सी., पी.एच-डी., साहित्य विशारद और धर्म विशारद उपाधि प्राप्त डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती के 100 शोध पत्र, चार रिव्यू प्रकाशित हैं। आपके नेतृत्व में 12 पी.एच-डी. की गईं। विज्ञान लेखन के अतिरिक्त आपका हिन्दी साहित्य लेखन में महत्वपूर्ण योगदान है। विज्ञान और मानव, कथा द्रव्य की, प्राचीन भारत में वैज्ञानिक चिंतन आपकी चर्चित कृतियां हैं। विश्वविद्यालयों के लिये आपने पाठ्य-पुस्तक लेखन किया। श्रेष्ठ विज्ञान शिक्षक, श्रेष्ठ विज्ञान पाठयपुस्तक लेखक, फीचर लेखक, शंकरदयाल शर्मा सृजन सम्मान, अनुसृजन सम्मान, तैलंग कुलम पुरस्कार और विभूति सम्मान से अलंकृत डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती ने इस पुस्तक में द्रव्य की अवस्थाओं का गहन अध्ययन किया है। रसायनशास्त्र द्रव्य का विज्ञान है। द्रव्य क्या है? यह पदार्थों में किस रूप में उपस्थित है? रसायन के क्षेत्र और महत्व को यदि आँका जाये तो हम कहेंगे रसायन विज्ञान उन द्रव्यों का अनुसंधान करता है जिसके द्वारा ब्रह्मांड बना है। पुस्तक में संवाद शैली के माध्यम से दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाली वस्तुओं का रसायन विज्ञान भली-भाँति समझाया गया है।*

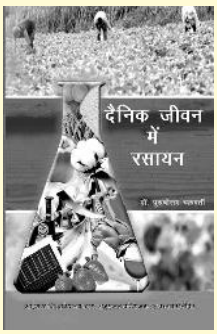


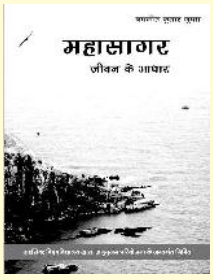


*नवनीत कुमार गुप्ता ने एम.एससी. विज्ञान संचार तक शिक्षा ग्रहण की और विज्ञान प्रसार से संबद्ध हुए। आपका जन्म 15 अगस्त 1982 को पचौर जिला रायगढ़ में हुआ। अब तक आपने जैव विविधता संरक्षण एवं जलवायु परिवर्तन तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता संबंधी 10 पुस्तकें लिखीं। साथ ही 11 पुस्तकों का संपादन तथा अनेक लेखों का अनुवाद किया। राजीव गांधी ज्ञान-विज्ञान लेखन पुरस्कार, मेदनी पुरस्कार, राजभाषा पुरस्कार, श्रीतरूशनपाल पाठक स्मृति बाल विज्ञान पुरस्कार से सम्मानित नवनीत कुमार गुप्ता ने महासागरों की विशेषताओं की संक्षिप्त जानकारी के साथ पृथ्वी ग्रह को सुन्दर और जीवनदायी ग्रह बनाए रखने में इनकी पर प्रकाश डाला गया है। महासागरों के अनोखेपन से परिचित कराने के साथ ही महासागरों एवं सागरों को प्रदूषणरहित बनाए रखने की आवश्यकता पर ध्यान आकर्षित किया गया है।*

# सावधान! डिजिटल बदलाव कहीं बाधक न बन जाए

शंभु सुमन

*शंभु सुमन दिल्ली में रहने वाले मूलतः बाढ़, पटना (बिहार) निवासी वरिष्ठ पत्रकार और लेखक हैं। विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी के विविध विषयों पर लगातार पत्र-पत्रिकाओं में छपते रहे हैं। चार पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। हिंदी पाठकों के लिए सरल-सहज भाषा में टेक्नॉलॉजी के क्षेत्र में हो रहे सतत विकास की जानकारी पहुँचाना लक्ष्य है। आप पत्रिका 'न्याय चक्र' से जुड़े हैं और आलेख, किताबें एवं पत्रिकाओं के वेब पोर्टल मैगबुक के समूह संपादक भी हैं।*

डिजिटल दौर में आधा दर्जन नई प्रौद्योगिकियाँ हमारे जीवन को तेजी से प्रभावित कर सकती हैं। वे हैं आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, रोबोटिक्स और आटोमेशन, ब्लाकचेन, इंटरनेट आफ थिंग्स, 3-डी प्रिंटिंग और आगमेंटेड एवं वर्चुअल रियलिटी की मिश्रित वास्तविकता। इनसे होने वाले डिजिटल बदलावों को बाधक बनने से बचाने के लिए जरूरी है इनकी उपयोगिता, स्वरूप और नफा-नुकसान को समझ लिया जाए।

आज हर जरूरत के कामकाज में डिजिटलाइजेशन का एक तरह से शुरूआती दौर है। चौ तरफा टेक्नॉलॉजी के इस्तेमाल की चर्चा जोरों पर है। छोटे-बड़े काम के निपटारे में सहुलियत वाली डिजिटल टेक्नॉलॉजी की उपयोगिता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इस तरह से हो रहे बदलावों में कई तरह की सुविधा-संपन्न संभावनाओं के साथ-साथ कुछ आशंकाएं भी छिपी हैं। ऐसे में यह तय करना जरूरी हो गया है कि हमें क्या चाहिए - डिजिटल बदलाव या उससे पैदा होने वाले व्यवधान! कारण कई बदलावों का सिलसिला तेजी से जारी है। कभी सुरक्षा के नाम पर तो कभी वैश्विक दौड़ में शामिल होने के लिए नई तकनीकों के उपयोग-प्रयोग के वास्ते। अपने कामकाज के अनुरूप उनकी उपयोगिता-अनुपयोगिता और कार्यक्षमता की सीमा को समझना बेहद जरूरी हो गया है।

अत्याधुनिक प्रौद्यौगिकी के फायदे अनगिनत हैं, लेकिन इससे होने वाले छोटे-बड़े नुकसान भी कम नहीं हैं। कई उदाहरण हमें आए दिन देखने-सुनने को मिल जाते हैं। अक्सर एटीएम से पैसे निकालते समय सर्वर डाउन होने पर खाते से पैसा तो डेबिट हो जाता है, लेकिन कई बार एटीम से बाहर नहीं निकल पाता है। विकट समस्या तब पैदा हो जाती है जब इसके आटोमेटिक दोबारा खाते में आने की सूचना मोबाइल में तीन-चार घंटे बाद भी नहीं मिलती है। यह स्थिति यात्रा कर रहे व्यक्ति के साथ काफी मुसीबत में डालने वाली होती है। आए दिन खाते में होने वाली साइबर सेंधमारी घटनाएं हो रही हैं। हमारी पर्सनल जानकारी पलक झपकते ही किसी और के पास चली जाती है। आनलाइन ट्रांजेक्शन के दौरान थोड़ी सी चूक भी नुकसानदायक साबित हो सकती है। ये कभी बहुचर्चित सोशल साइट फेसबुक या ट्विटर के जरिए होती हैं, तो कभी सर्च इंजन, डिजिटल पेमेंट के वालेट या ई-कामर्स के पोर्टल इसके संदेह में धिर जाते हैं। झारखंड में भूख से हुई एक महिला की मौत का कारण पीडीएस प्रणाली के डिजिटलाइजेशन को ही बताया गया। जांच में पाया गया कि इसके लिए उस महिला का राशनकार्ड समय रहते उसमें शामिल नहीं किया गया था।

ऐसे में डिजिटल बदलाव से रोजमर्रे की जिंदगी में काम आने वाली जरूरतों को बारिकी से समझना बेहद जरूरी हो गया है कि किस तरह उनसे हमें फायदा मिल सकता है? या फिर उनका कौन सा रूप हमें नुकसान पहुँचा सकता है? कारण इसके दूसरे चरण का भी आगाज़ हो चुका है, जो बहुत जल्द ही हमें पूरी तरह से अपनी गिरफ्त में ले लेगा। इनमें नई टेक्नॉलॉजी आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई), रोबोटिक्स और आटोमेशन, ब्लाकचेन, इंटरनेट आफ थिंग्स, 3-डी प्रिंटिंग और

आगमेंटेड एवं वर्चुअल रियलिटी की मिश्रित वास्तविकता हैं।

इनसे रोजमर्रे की जिंदगी में बहुत कुछ बदल जाने वाला है। दावा है कि जो जटिल और दुश्कर काम हम अभी तक नहीं कर पा रहे थे, वे इनकी बदौलत संभव हो जाएंगे। साथ ही इसकी मदद से कई कामकाज को सफलता पूर्वक निपटाया जा सकता है। इनसे हमारी जीवनशैली में असाधारण बदलाव आ सकता है। कुछ पुरानी आदतों को बदलता जरूरी हो सकता है और नए बदलावों के दुरूपयोग पर भी नज़र हो सकती है। इन तकनीकों से न केवल हमारा कारोबार और व्यापार माडल प्रभावित हो सकता है, बल्कि ये तथाकथित नई अर्थव्यवस्था में शामिल हो सकते हैं।

## आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस में नहीं आएगी कोई अड़चन

करीब दो दशक पहले 1999 में रॉबिन विलियम्स की मुख्य भूमिका वाली एक हॉलीवुड साईंस फिक्शन फिल्म बाइसेंटेनियल मैन आई थी। उसमें राबिन एनडीआर-144 नाम के रोबोट की भूमिका में थे। फिल्म में अदालत ने काफी तर्क-वितर्क के बाद उसे मानव घोषित कर दिया था। यह भले ही दर्शकों को अकल्पनीय लगने वाली एक विज्ञान कथा फिल्म थी। जबकि 2015 में हांगकांग की हैंनसन रोबोटिक्स लिमिटेड द्वारा बनाई गई ह्यूमोनाइड रोबोट 'सोफिया' की तब जबरदस्त चर्चा हुई, जब उसकी कई मानवीय गतिविधियों ने सबको चैंका दिया। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का यह अद्भुत कमाल था। अक्टूबर 2017 में इस तकनीक पर तैयार की गई सोफिया को साऊदी अरब की नागरिकता पाने वाला पहला संचालित रोबोट का दर्जा मिल गया। सोफिया की तुलना भले ही बाइसेंटेनियल मैन से नहीं की जा सकती, लेकिन इसमें मौजूद कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बावजूद अब किसी भी सूरत में फिल्मी पात्र की तरह इसे नकारा नहीं जा सकता है। रांची स्थित रंजीत श्रीवास्तव ने पचास हजार रुपये खर्चकर सोफिया का एक भारतीय संस्करण 'रश्मि' भी विकसित किया है। यह दुनिया की पहली हिंदी और दूसरी भारतीय भाषाएं बोलने वाली रोबट होगी।

अभी यह कहना गलत होगा कि एआई के पास कोई सुपरपावर है। यह मान लेना भी

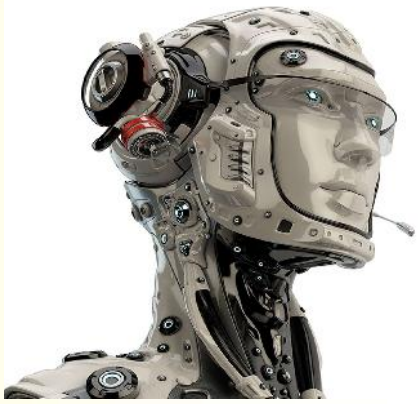

**अक्टूबर 2017 में इस तकनीक पर तैयार की गई सोफिया को साऊदी अरब की नागरिकता पाने वाला पहला संचालित रोबोट का दर्जा मिल गया। सोफिया की तुलना भले ही बाइसेंटेनियल मैन से नहीं की जा सकती, लेकिन इसमें मौजूद कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बावजूद अब किसी भी सूरत में फिल्मी पात्र की तरह इसे नकारा नहीं जा सकता है।**

जल्दबाजी होगी कि इसका हम पर पूरी तरह से कब्जा हो जाएगा, या फिर इस कारण हम डिजिटल गुलामी के दौर में आ सकते हैं। फिर भी ऐसी मशीनों में मानवीय बौद्धिकता की तरह प्रतिक्रिया जताने की आकांक्षा को व्यापक रूप से परिभाषित किया गया है। इस तरह निःसंदेह कह सकते हैं कि एआई मशीन-लर्निंग और डीप-लर्निंग समेत बेहद बड़े 'बिग डाटा' के एल्गोरिद्म को प्रशिक्षित किया जा सकता है। इनकी बदौलत कम्प्यूटिंग क्षमता में असाधारण वृद्धि की जा सकती है।

इस तरह के विकास से एक दुविधा भरी आशंका भी पैदा हो गई है कि एआई और आटोमेशन हमारी नौकरियां छिन लेगा। इंसान की तुलना में ऐसी मशीनें अधिक बुद्धिमान हो जाएंगी और हमारे कामकाज कम हो जाएंगे। इसे लेकर कई देशों में अपने-अपने स्तर से शोध किए जा रहे हैं। इसके बेहतर इस्तेमाल की संभावनाएं तलाशी जा रही हैं। ईवाई और नासकाम द्वारा किए गए एक अध्ययन से अनुमान लगाया गया है कि साल 2022 तक करीब 46 फीसदी कार्यक्षमता वैसी नई नौकरियों में शमिल होंगी जो आज नहीं हैं। या फिर उन्हें वैसी नौकरियों में लगा दिया जाएगा, जो मूल रूप से बौद्धिक स्तर पर बदले हुए होंगे। वर्ष 2017 में एक सर्वेक्षण से पता चला है कि वैश्विक स्तर पर 78 प्रतिशत कंपनियां या तो बड़े पैमाने पर एआई का उपयोग कर रही हैं या फिर निकट भविष्य में इसके उपयोग की योजना बना चुकी है। हालांकि भारत में एआई को अपनाने की गति धीमी और सीमित है। एक अनुमान के अनुसार भारत में सिर्फ 22 फीसदी कंपनियां ही किसी व्यावसायिक प्रक्रिया में एआई का उपयोग करती है। यह अच्छी बात है कि अब भारत सरकार इसकी क्षमता के प्रति जागरूक हो चुकी है। इसे सहर्ष स्वीकार लिया गया कि एआई पूरी दुनिया को कई सुविधाओं से संपन्न कर देने वाली युक्तियों से लैस है।

विश्व की दूसरी सबसे बड़ी आबादी वाले भारत में तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था होने के नाते एआई क्रांति में उसकी एक महत्वपूर्ण हिस्सेदारी हो सकती है। इस तथ्य को नीति (एनआईटीआई) आयोग ने जून 2018 में 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के लिए एक राष्ट्रीय रणनीति' पर तैयार किए गए मसौदे के पत्र की चर्चा के दौरान स्वीकार किया। लंबी बहस के बाद यह निष्कर्ष निकला गया कि भारत के पास इस सिलसिले में खुद को स्थापित करने की अकूत क्षमता है। यह कहा गया कि एआई सभी के लिए है। उसके बाद वैश्विक एआई मानचित्र पर ''रुएआईफारआल'' के यूनिक ब्रांड की शुरूआत की गई। इसे देखते हुए नीती आयोग ने पांच क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करने का फैसला लिया है। वे क्षेत्र हैं- स्वास्थ्य, कृषि, शिक्षा, स्मार्ट शहर और बुनियादी ढांचे एवं स्मार्ट मुवमेंट और ट्रांसपोर्ट। इस सिलसिले में यह महसूस किया गया कि देश में एआई अनुसंधान और व्यापक उपयोग के लायक विशेषज्ञों की कमी है। साथ ही गोपनीयता और सुरक्षा के संदर्भ में भी एक मजबूत दबदबे की आवश्यकता है, जिसमें डेटा इस्तेमाल संबंधी सतर्कता और औपचारिक नियमों के बारे में जानकारी शामिल हो।

## ब्लाकचेनः एक विश्वसनीय नेटवर्क बनाने की जरूरत

विश्व बैंक ने अगस्त 2018 में राष्ट्रमंडल बैंक ऑफ आस्ट्रेलिया को दुनिया में पहले ब्लाकचेन बांड की व्यवस्था के इस्तेमाल का अधिकार दे

**डिजिटल जमाने की करेंसी के बारे में वर्ल्ड इकोनामिक फोरम (डब्ल्यूईएफ) द्वारा जारी जून 2017 के थीम पेपर में कहा गया है कि ब्लाकचेन हमें खुलेपन, विकेंद्रीकरण और वैश्विक समावेश के नए युग की ओर खींच रहा है। बड़ी बैंकिंग, वित्तीय सेवाएं और बीमा कंपनियां, विनिर्माण फर्म एवं सरकारें ब्लाकचेन की अवधारणा के सबूतों का परीक्षण कर रही हैं। ब्लॉकचेन नेटवर्क सार्वजनिक या मान्यता प्राप्त निजी क्षेत्र का हो सकता है, जो इसमें शामिल होने के लिए अधिकृत होते हैं।**

दिया था। इस बावत 10 अगस्त को सीएनबीसी ने एक रिपोर्ट प्रसारित की थी। रिपोर्ट के अनुसार स्थानीय मुद्रा में आस्ट्रेलिया में जारी विदेशी बांड का जिक्र कंगारू बांड के रूप में किया था, जिसे बांड-आई का नाम दिया गया था। उन्हीं दिनों भारत में ब्लाकचेन के विकास का बढ़ावा देने की भी शुरूआत तेलंगाना में हुई थी। तब तेलंगाना स्टेट इन्फार्मेशन एंड टेक्नॉलॉजी, इलेक्ट्रॉनिक्स और संचार विभाग एवं आईटी सेवा देने वाली कंपनी टेक महेंद्रा हैदराबाद में भारत के पहले ब्लाकचेन जिले को लांच करने के लिए एक साथ आए थे। उनके बीच 3 अगस्त को एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए थे। इसी के साथ यह निर्धारित किया गया था कि तेलंगना सरकार भारत में ब्लाकचेन के प्रसार को बढ़ावा देने के लिए नियामक और नीति का सहायता देगी। इस संबंध में महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, गुजरात और कर्नाटक जैसे राज्यों ने अपने राज्य के राजस्व को बढ़ाने के लिए ब्लाकचेन परियोजना पर काम कर रहा है।

ब्लाकचेन मुख्य रूप से बिटकाइन जैसे क्रिप्टोकरेंसीज को सशक्त बनाने के लिए जाना जाता है, जो एक डिस्ट्रीब्यूटेड लेजर टेक्नॉलॉजी (डीएलटी) के रूप में होता है। यह लागत को कम करने और विश्वास को स्थापित करने का वादा देता है, लेकिन इसे सुरक्षित और विश्वसनीय लेनदेन को बनाए रखने के सिलसिले में कई चुनौतियों का सामना भी करना पड़ता है। तकनीकी तौर पर इसकी लोकप्रियता के पीछे का मुख्य कारण इसे इस्तेमाल करने वालों के पास लेजर का डेटा की प्रतिलिपी का होना है। जिसे पारंपरिक तरीकों के तुलना में अधिक सुविधाजनक और विश्वसनीय बताया गया है। सरकार का मानना है कि इससे भूमि और राजस्व अभिलेखों की डेटा को सुरक्षित रखा जा सकता है, तो इससे पंजीकरण और सत्यापन, जालसाजी और छेड़छाड़ को रोकथाम में मदद मिलेगी। उत्तर प्रदेश सरकार को विश्वास है कि आजीविका के लिए कृषि और पशुधन पर निर्भर रहने वाली प्रदेश की 150 मिलियन से अधिक आबादी को इस तकनीक की बदौलत हेरफेर, जालसाजी और धोखधड़ी से निजात मिल जाएगा।

डिजिटल जमाने की करेंसी के बारे में वर्ल्ड इकोनामिक फोरम (डब्ल्यूईएफ) द्वारा जारी जून 2017 के थीम पेपर में कहा गया है कि ब्लाकचेन हमें खुलेपन, विकेंद्रीकरण और वैश्विक समावेश के नए युग की ओर खींच रहा है। बड़ी बैंकिंग, वित्तीय सेवाएं और बीमा कंपनियां, विनिर्माण फर्म एवं सरकारें ब्लाकचेन की अवधारणा के सबूतों का परीक्षण कर रही हैं। ब्लॉकचेन नेटवर्क सार्वजनिक या मान्यता प्राप्त निजी क्षेत्र का हो सकता है, जो इसमें शामिल होने के लिए अधिकृत होते हैं। कोई इंट्रानेट और इंटरनेट के बीच अंतर को पसंद कर सकता है। अधिकतर का संचालन निजी ब्लॉकचेन के साथ किए जा रहे हैं।

उदाहरण के तौर पर भारत में बैंकों ने फरवरी 2017 में ब्लाकचेन आधारित समाधान के लिए 'बैंकचेन' नाम का एक संगठन बना लिया है। इस बैंकचेन समुदाय के 37 सदस्यों में 28 भारतीय बैंक भी शामिल हैं। इन बैंकों में देश के सबसे बड़े स्टेट बैंक ऑफ इंडिया समेत आईसीआईसीआई बैंक लिमिटेड, कोटक महेंद्रा बैंक लिमिटेड, एचडीएफसी बैंक लिमिटेड और यस बैंक लिमिटेड भी हैं। इसे आगे बढ़ाने की घोषणा महेंद्रा ग्रुप और आईबीएम ने वर्ष 2015 में की थी। क्लाउड आधारित अनुमति वाले ब्लॉकचेन को देशभर में निर्वाधित ढंग से फिनांस चेन को सुरक्षा, पारदर्शिता और परिचालन प्रक्रियाओ को देखते हुए विशेष ध्यान रखा गया है।

केंद्र सरकार का थिंक टैंक नीति आयोग ब्लाकचेन तकनीक के उपयोग पर काम रही है। उसकी नजर इससे संबंधित तमाम तरह की परीक्षणों पर है। उसके द्वारा इलेक्ट्रॉनिक्स स्वास्थ्य रिकार्ड और भूमि अभिलेखों एवं दूसरे ब्लाकचेन आधारित नियंत्रण के संचालन की योजना बनाई गई है। योजना के अनुसार वर्ष 2019 के बाद ब्लाकचेन के जरिए डिजिटल प्रमाण पत्र जारी किए जाएंगे।

बहरहाल, ब्लाकचेन के फायदे के अतिरिक्त नुकसान की भी आशंकाएं हैं। कारण यह कई व्यवस्था को बदल सकता है। ऐसे में हमारी सूझबूझ, अज्ञानता और तत्परता की कमी से अव्यवस्था फैल सकती है। वित्तीय मामले से जुड़ी तमाम व्यवस्था इससे प्रभावित हो सकती है। ब्लॉकचेन तकनीक से इलेक्ट्रॉनिक हेल्थ रिकार्ड(ईएचआर) के आदान-प्रदान करने के लिए लचीले इकोसिस्टम जैसी प्रणाली बनाकर सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था को बाधित कर सकता है। इसी तरह से ब्लाकचेन से स्टुडेंड रिकार्ड, उनके फेकल्टी रिकार्ड और शैक्षणिक प्रमाणपत्र को नियंत्रित किया जा सकता है। यहाँ भी उनसे संबंधित डेटा जुटाने में विशेष ध्यान देना जरूरी होगा। खेतीहर जमीन के रिकार्ड और कृषि बीमा के रिकार्ड ब्लॉकचेन के जरिए प्रबंधित करना अगर लाभकारी होगा, तो इसके परिणाम आने से पहले की तैयारियों में ईमानदारी भी बरतनी होगी। बिजली की अपूर्ति के लिए बाजार व्यवस्था को बनाने में ब्लाकचेन की भूमिका महत्वपूर्ण साबित हो सकती है।

**सेंसर लगे विभिन्न उपकरण अगर इंटरनेट की मदद से एक-दूसरे के साथ संवाद कायम कर सकते हैं, तो इनसे हमारे कामकाज को निपटाना सहज-सरल हो सकता है। कम लागत वाले सेंसर की उपलब्धता, 4जी एलटीई, वाईफाई और छोटे-छोटे बने सेल के नेटवर्क से 'इंटरनेट ऑफ थिंग्स' को सुचारू ढंग से संचालित किया जा सकता है। इसमें बड़े-से-बड़े डेटा को भी संयमित कर उपयोगी बनाया जा सकता है। आने वाले दिनों में इंटरनेट के 5जी नेटवर्क का साथ मिलने से आईओटी के और विकासित एवं उपयोगी होने की उम्मीद है।**

## इंटरनेट ऑफ थिंग्स: सही कनेक्शन बनाने की जरूरत

क्या आप जानते हैं कि स्मार्ट शहरों के स्मार्ट होम में क्या कुछ बदलने वाला है? आपने कभी सोचा है कि दीवार पर लगा स्मार्ट टीवी आपके स्मार्ट रेफ्रिजरेटर के साथ संवाद कायम कर सकता है। उसके खाली होने पर वही रेफ्रीजरेटर आपके स्थानीय पंसारी के दुकानदार को खाने-पीने की चीजों का आर्डर कर सकता है। रसोई में रखा एक छोटा सा स्मार्ट स्पीकर आपके हर सवाल का तुरंत जवाब दे सकता है। घर बैठे सुदूर डॉक्टर द्वारा आपका इलाज संभव हो सकता है। यह सब आईओटी यानी इंटरनेट ऑफ थिंग्स की अवधारणा की बदौलत संभव है। सेंसर लगे विभिन्न उपकरण अगर इंटरनेट की मदद से एक-दूसरे के साथ संवाद कायम कर सकते हैं, तो इनसे हमारे कई कामकाज को निपटाना सहज-सरल हो सकता है। कम लागत वाले सेंसर की उपलब्धता, 4जी एलटीई, वाईफाई और छोटे-छोटे बने सेल के नेटवर्क से 'इंटरनेट ऑफ थिंग्स' को सुचारू ढंग से संचालित किया जा सकता है। इसमें बड़े-से-बड़े डेटा को भी संयमित कर उपयोगी बनाया जा सकता है। आने वाले दिनों में इंटरनेट के 5जी नेटवर्क का साथ मिलने से आईओटी के और विकासित एवं उपयोगी होने की उम्मीद है।

नासकॉम के अनुसार 2020 तक भारत में आईओटी का बाजार 2.7 यूनिट गजेट के साथ 15 बिलियन डॉलर तक बढ़ने की उम्मीद है। जबकि उसी दौरान इसका वैश्विक बाजार तीन ट्रिलियन डॉलर से अधिक बढ़ने की उम्मीद जताई गई है। इसकी व्यापक उपयोगिता के कई उदाहरण सामने आ चुके हैं। इसकी शुरूआत भारत के कुछ अस्पतालों में गर्भवती महिलाओं को खास किस्म के सेंसर युक्त उपकरण पहनाए जाने से हुई हैं। यह उपकरण उस महिला को मोबाइल फोन एप से जुड़े डॉक्टर के संपर्क में ले आता है। इसके जरिए डॉक्टर को महिला के गर्भ में पल रहे भ्रूण हृदय गति, उसका विकास और गर्भाशय की गतिविधियों से संबंधित वास्तविक जानकारी मिलने लगती है। डॉक्टर अपने स्मार्टफोन की मदद से ही महिला और उसकी गर्भावस्था में पलने वाले शिशु की तमाम गतिविधियों पर न केवल नज़र रख पाता है, बल्कि जरूरत पड़ने पर उपचार भी कर देता है।

इसके अलावा भारत सरकार के डिजिटल इंडिया प्रोग्राम, 100 स्मार्ट शहरों की परियोजना, मेक इन इंडिया प्रोजेक्ट और स्मार्ट एनर्जी प्रोजेक्ट से देश में आईओटी उपकरणों की अच्छी-खासी वृद्धि होने की उम्मीद जाग गई है। सरकार स्टार्टअप के साथ साझेदारी कर रही है और शिक्षा तकनीक, स्वास्थ्य देखभाल तकनीक, ई-शासन, वित्त और कृषि जैसे क्षेत्रों में नयेपन के साथ समाधान विकसित करने के लिए सलाह दे रही है। उन्हें बताया जा रहा है कि वे इसकी मदद से किस तरह से दुर्लभ कार्य को संपन्न कर सकते हैं। जैसे समुद्र की गहराई से तेल निकाले जाने के दरम्यान कई तरह की बाधाओं और असुविधाओं का सामना करना होता है। आफशोर ड्रिलिंग रिंग के अंदर सेंसर लगे आईओटी की मदद से उसकी निगरानी और तेल के दबाव को नियंत्रित करने की जरूरतें पूरी की जा सकती है।

इन सुविधाओं के साथ-साथ आईओटी सिस्टम की जटिलताओं को समझना और उस पर नज़र रखना भी जरूरी है। यानी कि आईओटी के डेटा प्रबंधन, सुरक्षा, विलंबता और विश्वसनीयता के मुद्दों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक नियमों का पालन महत्वपूर्ण जरूरी होगा। आईओटी को एआई के सहयोग की जरूरत होगी। आईओटी अपने कार्य के दौरान बड़े डेटा के खजाने से भर जाएगा, जिन्हें संभालना और बुद्धिमानी के साथ विश्लेषण करने लिए एआई के मशीन लर्निंग तकनीक अपनाना जरूरत होगा।

## 3डी प्रिंटिंग : मैन्यूफैक्चरिंग यानी विनिर्माण का बदल देगा चेहरा

थ्री-डी यानी कि त्रि-आयामी प्रिंटिंग का अर्थ किसी छापाखाने से नहीं, बल्कि विनिर्माण के एक अद्भुत तकनीक से है। इससे पारंपरिक निर्माण और उत्पादन का चेहरा बदल रहा है और आने वाले दिनों में और भी बदलाव की संभावनाएं बन गई हैं। आज कम्प्यूटिंग से संचालित थ्री-डी प्रिंटेड आभूषण, टूथब्रश, फुटबॉल जूते, कार के पुर्जे, कस्टम-डिजाइन

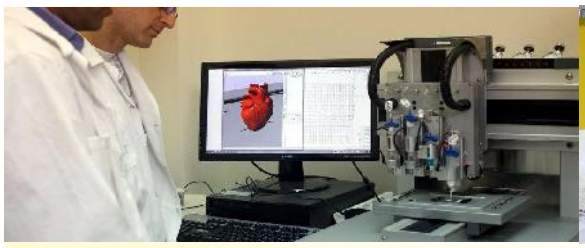

वाले केक, मानव अंग, घर, हवाई जहाज के पार्ट्स और यहाँ तक कि काफी प्रभावशाली लिथियम-आयन बैटरी तक बनाए जाने लगे हैं। और तो और, इसकी मदद से बंदूकें तक बनाई जा सकती है।

पिछले दिनों अमेरिकी संघीय न्यायाधीश ने एक वेबसाइट defdist.org को ब्लॉक कर दिया था। उस पर थ्री-डी बंदूकों के ब्लूप्रिंट साझा करने का अरोप लगाया गया था। इसके जरिए हजारों लोगों ने इन हथियार के लिए ब्लूप्रिंट डाउनलोड कर लिए थे। इसके बाद ही वेबसाइट को ब्लॉक करने का फैसला सुनाया गया था। यह ऐक्शन तब लिया गया था जब एक रेडियो प्रोग्राम निर्माता एनपीआर ने अपनी 14 अगस्त की रिपोर्ट में बताया था कि कुछ थ्री-डी प्रिंटिंग फर्म बंदूक-ब्लॉक के सॉफ्टवेयर का उपयोग कर रहे हैं। यह एक तरह से इस तकनीक के दुरूपयोग की आशंका को दर्शाता है।

बाजार में मांग और पूर्ति पर नज़र रखने वाली संस्था 6डब्लयू रिसर्च के अनुसार भारत में थ्री-डी प्रिंटर का बड़ा बाजार बनने की उम्मीद है। एक अनुमान के मुताबिक इसका कारोबार वर्ष 2021 तक 79 मिलियन डॉलर तक पहुँच सकता है। इनके चलन में आने से विनिर्माण के क्षेत्र में कम लागत पर उत्पादकता बढ़ सकती है। इस सिलसिले में मेक इन इंडिया अभियान के आवेदकों की संख्या लगातार बढ़ रही है। भारत में चिकित्सा, वास्तुकला, मोटर वाहन, औद्योगिक जगत, एयरोस्पेस, सैन्य और दूसरे क्षेत्रों में उपयोग के लिए थ्री-डी प्रिंटर के इस्तेमाल की बेहतर संभावना बन चुकी है।

एक उदाहरण मेडिकल साइंस में उपयोग का है। पुडुचेरी में जवाहरलाल इंस्टीट्यूट आफ पोस्ट ग्रेजुएट मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च(जीपर) में भारतीय प्लास्टिक सर्जन की एक टीम ने तीन साल की लड़की की विकृत खोपड़ी को मूल आकार देने के लिए थ्री-डी प्रिंटर तकनीक की मदद ली थी। तब मुंबई स्थित थ्रीडी प्रिंटर निर्माता कंपनी डिवाइडेड बाई जीरो टेक्नॉलॉजी की मदद ली गई थी, लेकिन अब जीपर के पास अपना थ्री-डी प्रिंटर तकनीक है।

यह निर्माण की खास तकनीक है, जिसमें किसी भी वस्तु को परत दर परत बनाई जा सकती है। इसका संचालन कम्प्यूटिंग के जरिए स्वचालित तकनीक के साथ होता है। सामान्य किस्म के घरेलू थ्रीडी प्रिंटिंग प्रक्रिया में 'प्रिंट हेड' शामिल होता है। इसमें से प्लास्टिक या धातुओं के मटेरियल तेजी से बाहर निकलता है और पहले से तय कि गए प्रोग्राम के अनुसार वस्तु का निर्माण होता है। ग्लोबल फर्म मार्केट्स एंड मार्केट्स के अनुसार इसका वैश्विक बाजार तेजी से बढ़ रहा है, जिसके 2023 तक 32.78 अरब डॉलर होने की उम्मीद है। भारत में इसकी पहुँच विदेशी कंपनी स्ट्रैटाइसिस और ऑप्टोमेक के गठजोड़ के माध्यम से बन चुकी है, जिसका उपयोग अंतरिक्ष के कामकाज में ज्यादा हो रहा है। इनमें प्रमुख कंपनियां अल्टेम टेक्नॉलॉजीज, इमेजिनिनियम, ब्रह्मा3, केसीवॉट्स और जेग्रुप रोबोटिक्स हैं।

## एआर और वीआर की मिश्रित वास्तविकता का संयोजन

आग्मेंटेड रियलिटी(एआर) और वर्चुअल रियलिटी(वीआर) का मिश्रित स्वरूप नए रोमांच के साथ आ चुका है। दोनों का अनुभव स्मार्टफोन और छोटे से हेडसेट में लिया जा सकता है। जैसे इसके जरिय यदि आपको हाथ में हाथी समाने का अनुभव मिल सकता है, तो किस छोटे से गधे द्वारा लात मारे जाने का एहसास भी किया जा सकता है। इसका एक पहलू और भी है। जैसे चिकित्सा विज्ञानी जटिल जैविक नेटवर्क का पता लगाने के लिए माइक्रोसॉफ्ट होलोलेन्स का उपयोग कर रहे हैं, जिससे एक ऐसा उपकरण तैयार करने की कोशिश जारी है, जो कैंसर और मधुमेह जैसे विकारों से संबंधित प्रोटीन और जीन के बीच महत्वपूर्ण संबंध ढूंढने में मदद कर सके। इन दोनों उदाहरणों में एआर और वीआर जैसी प्रौद्योगिकियों के मिश्रण को दर्शाया गया है। हालांकि दोनों के अलग-अलग अनुभव हैं। एक अगर उन्नत वास्तविकता को दर्शाता है, तो दूसरा आभासी वास्तविकता से परिचय करवाता है, लेकिन इनकी विभिन्न खूबियां भी हैं।

आभासी वास्तविकता में पूरी तरह से कम्प्यूटर या ऑनलाइन गढ़ी गई काल्पनिक दुनिया होती हैं। दूसरी तरफ एआर असली दुनिया से संबंधित है, लेकिन इसमें जानकारी की परतों में आभासी दुनिया के तत्व शामिल होते हैं। इनके मिश्रित वास्तविकताओं (वीआर और एआर) में दोनों दुनिया को अपनाया जा सकता है। इसे नया नाम एमआर दिया गया है। इसे अपनाने के लिए हेडसेट और मिक्स रियलिटी कंटेंट की जरूरत एक साथ होगी है। इस आधार पर मिश्रित वास्तविकता में अलग से बड़े कम्प्यूटिंग प्लेटफॉर्म के बनने की क्षमता है। इसके उपकरण जादू जगाने जैसे लग सकते हैं, जबकि इनकी मदद से दुर्लभ काम को आसानी से निपटाए जा सकते हैं। जैसा कि पिछले दिनों चिकित्सा विज्ञानियों ने गूगल चश्मे की मदद से सफल ऑपरेशन कर सभी को चौंका दिया।

यही कारण है कि इस क्षेत्र में कई कंपनियाँ पैसा लगा रही हैं, जो करीब दो बिलियन डॉलर के करीब है। इनमें गूगल, अलिबाबा ग्रुप, टेमासेक और जेपी मार्गन हैं। इसे आगे बढ़ाने के लिए फेसबुक, माइक्रोसॉफ्ट, सोनी इंक, सैमसंग और गूगल एमआर पर तेजी से काम कर रहे हैं। इसके गजेट की मांग वैश्विक स्तर पर बढ़ने वाली है, जिनका उपयोग एयरोस्पेस और रक्षा क्षेत्र के अतिरिक्त चिकित्सा, ई-कॉमर्स, रियल इस्टेट, विनिर्माण, शिक्षा, कृषि और चिकित्सा आदि में किया जा सकता है।

shambhusuman11@gmail.com

# इसरो
## कामयाबी और भविष्य की योजनाएं

शशांक द्विवेदी

*राजस्थान मेवाड़ यूनिवर्सिटी के उपनिदेशक शशांक द्विवेदी 'टेक्नीकल टुडे' नामक पत्रिका का संपादन कर रहे हैं। वे विगत दो दशकों से विज्ञान संचारक और विज्ञान लेखन के रूप में भी कार्य कर रहे हैं। देश के प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिकाओं में आपके लेख नियमित रूप से प्रकाशित एवं चर्चित हुए हैं।*

बीता साल 2018 इसरो के लिए बेहद शानदार रहा है, यह साल इसरो की तमाम कामयाबियों के लिए जाना जाएगा। इस साल इसरो ने सात सफल लांचिंग की हैं। ये आंकड़ा अगले साल तक कई गुना बढ़ जाएगा। 12 जनवरी, 2018 को कार्टोसैट -2 भेजा गया, 14 नवंबर, 2018 को जीसैट-29 लांच किया गया। यह इसरो का सबसे भारी उपग्रह है। इसे भारत ने अपने ही रॉकेट जीएसएलवी मार्क-3 डी टू से भेजा। यह इसरो और देश के लिए बहुत बड़ी कामयाबी है। यह रॉकेट आगे चलकर चंद्रयान-2 और मैन मिशन के लिए काम में लाया जाएगा। इससे भारत को भारी उपग्रह भेजने में आत्मनिर्भरता मिली है। 29 नवंबर को पीएसएलवी सी-43 से हाइसिस लांच हुआ। 19 दिसंबर को जीएसएलवी एफ-11 से जीसैट-7ए लांच हुआ और 5 दिसंबर को फ्रेंच गुयाना (विदेशी जमीन से) से जीसैट-11 की लांचिंग हुई। इसरो ने इस वर्ष संचार, भू-प्रक्षेपण और नौवहन के क्षेत्र में कई बड़ी और साहसिक कामयाबियां हासिल की हैं। इन सबसे भारतीय वायुसेना की ताकत भी कई गुना तक बढ़ी है। इसरो ने जीएसएलवी रॉकेट से लगातार छठी सफल लॉन्चिंग की।

**इसरो की गगनयान परियोजना** : इसके साथ ही केंद्र सरकार ने हजार करोड़ की महत्वाकांक्षी गगनयान परियोजना को मंजूरी दे दी है। अगर यह मिशन कामयाब हुआ तो अंतरिक्ष पर मानव मिशन भेजने वाला भारत दुनिया का चौथा देश होगा। इस प्रोजेक्ट में मदद के लिए भारत ने पहले ही रूस और फ्रांस के साथ करार किया है। इसके तहत तीन सदस्यीय दल को सात दिनों के लिए अंतरिक्ष में भेजा जाएगा। इसरो के चेयरमैन के सिवन का कहना है कि उनकी टीम इस मिशन पर बीते चार महीने से काम कर रही है। मिशन के डिजाइन पर भी काम शुरू हो चुका है। टेस्ट फ्लाइट के तौर पर इसके फाइनल मिशन से पहले दो मानवरहित मिशन लांच किए जाएंगे। इसरो चेयरमैन का कहना है कि पहला मानवरहित मिशन यानी टेस्ट फ्लाइट दिसंबर, 2020 में लांच होगी। दूसरा मानवरहित टेस्ट जुलाई, 2021 में लांच होगा। इसके बाद आखिर में फाइनल मिशन यानी ह्यूमन स्पेस फ्लाइट को दिसंबर 2021 में लांच किया जाएगा। बजट पास होने के बाद क्रू की ट्रेनिंग पर काम शुरू हो चुका है। इसमें जरूरत पड़ने पर विदेशी ट्रेनिंग को भी शामिल किया जा सकता है। क्रू मेंबर का चुनाव इसरो और आईएएफ द्वारा संयुक्त तौर पर किया जाएगा। जिसके बाद उन्हें दो से तीन सालों तक ट्रेनिंग दी जाएगी। इस मिशन के लिए राकेश शर्मा का भी परामर्श लिया जाएगा। इसके लिए कई बड़ी टेक्नॉलॉजी जैसे क्रू मॉड्यूल, क्रू एस्केप सिस्टम, एनवायरमेंट सिस्टम और लाइफ स्पोर्ट सिस्टम का इस्तेमाल किया जाएगा। अभी तक ह्यूमन स्पेस फ्लाइट प्रोजेक्ट के लिए बड़ी तकनीकों को विकसित करने में 173 करोड़ रुपये का खर्च आ चुका है।

अंतरिक्ष में जाने वाले एस्ट्रोनॉट्स को ट्रेनिंग देने के लिए बैंगलोर में ट्रेनिंग सेंटर खोला जाएगा। पहले इसका लक्ष्य 2012 तय किया गया था। अब इसरो एक स्थायी सेंटर खोलने की योजना बना रहा है। बताया जा रहा है कि गगनयान मिशन के लिए चुने जाने वाले लोगों को विदेशी सेंटर में ट्रेनिंग दी जाएगी। इन्हें करीब दो साल तक शून्य गुरुत्वाकर्षण पर ट्रेनिंग दी जाएगी ताकि वह अंतरिक्ष में होने वाले अनुभवों से दो चार हो जाएं। ट्रेनिंग का कुछ हिस्सा बैंगलोर में वायु सेना के इंस्टीट्यूट ऑफ एयरोस्पेस मेडिसीन में पूरा कराया जाएगा। अभी तक उम्मीदवारों के चयन का काम शुरू नहीं हुआ है।

**2019 में इसरो** : भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने 2019 के लिए 22 से ज्यादा मिशनों का लक्ष्य रखा है। प्रधानमंत्री कार्यालय में राज्यमंत्री जितेंद्र सिंह ने एक सवाल के लिखित जवाब में राज्यसभा को यह जानकारी दी। इसरो ने अगले तीन साल में पचास से अधिक मिशनों के लक्ष्य की अपनी रूप-रेखा प्रकट की है। उन्होंने कहा कि सरकार ने अंतरिक्ष गतिविधियों के लिए

बजट में वृद्धि की है। वास्तव में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान कार्यक्रम में पिछले कुछ वर्षों के दौरान अत्यधिक सफल और वाणिज्यिक मिशनों के कारण अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। फिलहाल इसरो के पास बड़ी संख्या में स्वीकृत मिशन हैं जो उद्योग के लिए भी एक बड़ा अवसर दर्शाते हैं।

**2018 में इसरो के अभियान** : अपनी सैन्य क्षमताओं और निगरानी तंत्र को बेहद मजबूत बनाने के लिए जनवरी 2018 में भारत ने पोलर सैटेलाइट लॉन्च व्हीकल (पीएसएलवी-सी 38) की सहायता से कार्टोसैट-2 श्रृंखला के तीसरे रिमोट सेंसिंग उपग्रह सहित 30 उपग्रहों को सफलतापूर्वक प्रक्षेपित किया था। प्रक्षेपित उपग्रहों में 14 देशों के 29 विदेशी उपग्रह भी शामिल थे। ये सैटेलाइट न सिर्फ भारत के सरहदी और पड़ोस के इलाकों पर अपनी पैनी नजर रखेगा बल्कि स्मार्ट सिटी नेटवर्क की योजनाओं में भी मददगार रहेगा। ये सैटेलाइट 500 किमी से भी ज्यादा ऊँचाई से सरहदों के करीब दुश्मन की सेना के खड़े टैंकों की गिनती कर सकता है। भारत के पास पहले से ऐसे पांच रिमोट सेंसिंग सैटेलाइट मौजूद है। कार्टोसैट-2 श्रृंखला के तीसरे उपग्रह के प्रक्षेपण के साथ ही भारत की अंतरिक्ष दृष्टि और अधिक पैनी और व्यापक होने जा रही है। हालिया रिमोट सेंसिंग उपग्रह की विभेदन क्षमता 0.6 मीटर की है। इसका अर्थ यह है कि यह छोटी चीजों की तस्वीरें ले सकता है। कोर्टोसैट-2 श्रृंखला के उपग्रह के सफल प्रक्षेपण से भारत को कई फायदे होगें जिसमें अब भारत में किसी भी जगह को अंतरिक्ष से देखने की क्षमता भी हासिल होगी। कार्टोसैट-2 सीरीज के उपग्रहों में पैनक्रोमैटिक और मल्टीस्पेक्ट्रल इमेज सेंसर लगे हैं। इनसे रिमोट सेंसिंग में भारत की काबिलियत सुधरेगी। इन उपग्रहों से मिले डाटा का इस्तेमाल सड़क निर्माण के काम पर निगरानी रखने, बेहतर लैंड यूज और जल वितरण के लिए होगा।

**जीसैट-7ए का सफल प्रक्षेपण** : पिछले दिनों इसरो ने भूस्थैतिक संचार उपग्रह जीसैट-7ए का सफल प्रक्षेपण कर इतिहास रच दिया है। यह सैटलाइट भारतीय वायुसेना के लिए बहुत खास है। इसके जरिये वायुसेना को भूमि पर रडार स्टेशन, एयरबेस और एयरबॉर्न वार्निंग एंड कंट्रोल सिस्टम से इंटरलिंकिंग की सुविधा मिलेगी, जिससे उसकी नेटवर्क आधारित युद्ध संबंधी क्षमताओं में विस्तार होगा और ग्लोबल ऑपरेशंस में दक्षता बढ़ेगी।

जीसैट-7ए न सिर्फ सभी एयरबेसेज को आपस में जोड़ेगा बल्कि आईएएफ के ड्रोन ऑपरेशंस में भी ईजाफा करेगा। यह सैटेलाइट आईएएफ के कंट्रोल स्टेशनों और ड्रोन के सैटेलाइट कंट्रोल सिस्टम को अपग्रेड कर सकेगा।

**जीसैट-11 की लांचिंग** : इसके साथ ही एक बड़ी कामयाबी हासिल करते हुए भारतीय अंतरिक्ष एजेंसी इसरो ने अब तक के सबसे वजनी सैटेलाइट का प्रक्षेपण कर दिया। दक्षिणी अमेरिका के फ्रेंच गुयाना के एरियानेस्पेस के एरियाने-5 रॉकेट से 5,854 किलोग्राम वजन वाले 'सबसे अधिक वजनी' उपग्रह जीसैट-11 को लॉन्च किया गया। जीसैट-11 देशभर में ब्रॉडबैंड सेवाएं उपलब्ध कराने में अहम भूमिका निभाएगा। इस सैटेलाइट को इंटरनेट कनेक्टिविटी के लिए गेम चेंजर कहा जा रहा है। इसके काम शुरू करने के बाद देश में इंटरनेट स्पीड में क्रांति आ जाएगी। इसके जरिए हर सेकंड 100 गीगाबाइट से ऊपर की ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटी मिलेगी।

कुछ साल पहले एक समय ऐसा भी था जब अमेरिका ने भारत के उपग्रहों को लॉंच करने से मना कर दिया था। आज स्थिति ये है कि अमेरिका सहित तमाम देश खुद भारत से अपने उपग्रहों को प्रक्षेपित करवा रहें हैं। नवंबर 2018 में इसरो ने एक बार फिर अंतरिक्ष में इतिहास रचते हुए भारत सहित 9 देशों के 31 उपग्रहों को पोलर सैटलाइट लॉन्च व्हीकल (पीएसएलवी) सी-43 के जरिए लॉन्च कर दिया। इस प्रक्षेपण की खास बात यह है कि इसरो ने दो साल में चौथी बार 30 से ज्यादा सैटेलाइट लॉन्च किए। जनवरी 2017 में 104 उपग्रह लॉन्च कर इसरो ने रिकॉर्ड बनाया था। पीएसएलवी की 45वीं उड़ान है जिसमें एक माइक्रो और 29 नैनो सैटेलाइट शामिल हैं। पोलर सैटेलाइट लॉन्च व्हीकल (पीएसएलवी) की इस साल में यह छठी उड़ान थी। इसमें भारत के सबसे ताकतवर इमेजिंग सैटेलाइट हाइसइस के अलावा अमेरिका (23 उपग्रह) और ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, कोलंबिया, फिनलैंड, मलयेशिया, नीदरलैंड और स्पेन (प्रत्येक का एक उपग्रह) के उपग्रहों का प्रक्षेपण किया गया । इसरो के अनुसार इन उपग्रहों के प्रक्षेपण के लिए उसकी वाणिज्यिक इकाई (एंट्रिक्स कारपोरेशन लिमिटेड) के साथ करार किया गया है।

**मुश्किल है एक साथ ज्यादा उपग्रहों की लॉन्चिग** : इतने सारे उपग्रहों को एक साथ अंतरिक्ष में छोड़ना आसान काम नहीं है। इन्हें कुछ वैसे ही अंतरिक्ष में प्रक्षेपित किया गया जैसे स्कूल बस बच्चों को क्रम से अलग-अलग ठिकानों पर छोड़ती जाती हैं। बेहद तेज गति से चलने वाले अंतरिक्ष रॉकेट के साथ एक-एक सैटेलाइट के प्रक्षेपण का तालमेल बिठाने के लिए बेहद काबिल तकनीशियनों और इंजीनियरों की जरूरत पड़ती है। हर सेटेलाइट तकरीबन 7.5 किलोमीटर प्रति सेकेंड की रफ्तार से प्रक्षेपित होता है । अंतरिक्ष प्रक्षेपण के बेहद फायदेमंद बिजनेस में इसरो को नया खिलाड़ी माना जाता है। भरोसेमंद लॉन्चिग में इसरो की ब्रांड वेल्यू में लगातार इजाफा हो रहा है । इससे लॉन्चिग के कई और कॉन्ट्रेक्ट एजेंसी की झोली में गिरने की उम्मीद है।

**अंतरिक्ष में भारत के बढ़ते कदम** : कम लागत और लगातार सफल लांचिंग की वजह से दुनिया का हमारी स्पेस टेक्नॉलॉजी पर भरोसा बढ़ा है तभी अमेरिका सहित कई विकसित देश अपने सैटेलाइट की लॉंचिंग भारत से करा रहें है। फ़िलहाल हम अंतरिक्ष विज्ञान, संचार तकनीक, परमाणु उर्जा और चिकित्सा के मामलों में न सिर्फ विकसित देशों को टक्कर दे रहें है बल्कि कई मामलों में उनसे भी आगे निकल गये है। अंतरिक्ष बाजार में भारत के लिए संभावनाएं बढ़ रही है, इसने अमेरिका सहित कई बड़े देशों का एकाधिकार तोड़ा है। असल में इन देशों को हमेशा यह लगता रहा है कि भारत यदि अंतरिक्ष के क्षेत्र में इसी तरह से सफ़लता हासिल करता रहा तो उनका न सिर्फ उपग्रह प्रक्षेपण के क़ारोबार से एकाधिकार छिन जाएगा बल्कि मिसाइलों की दुनिया में भी भारत इतनी मजबूत स्थिति में पहुँच सकता है कि बड़ी ताकतों को चुनौती देने लगे। भारत अंतरिक्ष विज्ञान में नई सफलताएं हासिल कर विकास को अधिक गति दे सकता है। कुल मिलाकर अंतरिक्ष के क्षेत्र में साल 2018 भारत के लिए बेहद शानदार रहा है। देश में गरीबी दूर करने और विकसित भारत के सपने को पूरा करने में इसरो काफ़ी मददगार साबित हो सकता है ।

dwivedi.shashank15@gmail.com

# रोबोटिक्स इंजीनियरिंग

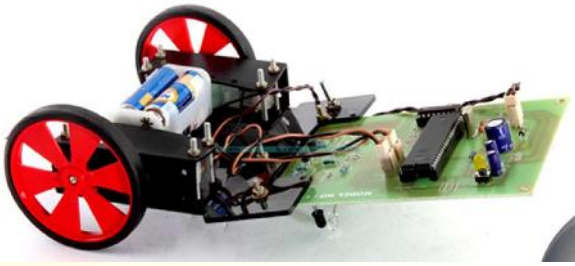

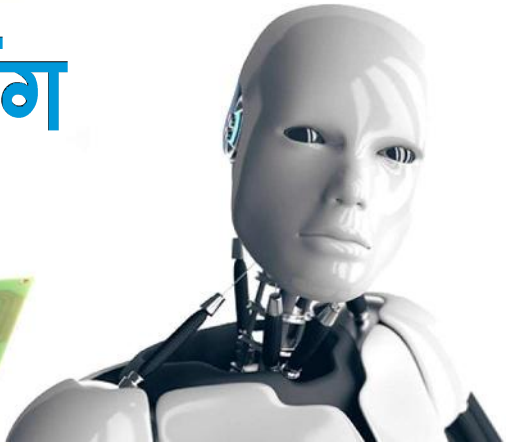

संजय गोस्वामी

*संजय गोस्वामी विगत पंद्रह वर्षों से विज्ञान लेखन से जुड़े हैं आपने हिन्दी विज्ञान के क्षेत्र में तीन सौ से अधिक कॅरियर लेख लिखे हैं जो विज्ञान विषयक होते हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में वे विगत लगभग पांच वर्षों से शृंखलाबद्ध लिख रहे हैं। इसके अतिरिक्त विज्ञान लेख, विज्ञान समाचार, विज्ञान कविता, विज्ञान रपट, विज्ञान समीक्षा आदि का लेखन और प्रकाशन हुआ है। कई पुरस्कारों से सम्मानित संजय गोस्वामी हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भा.प.अ. केन्द्र, मुंबई के कार्यकारी सदस्य हैं। आप इन दिनों मुंबई में रहकर हिन्दी विज्ञान पत्रिका में लेखन एवं संपादन से संबद्ध हैं।*

क्या आप कम्प्यूटर द्वारा कार चला सकते हैं? कम्प्यूटर भाषण या भावनाओं को कैसे पहचानता है? सॉफ्टवेयर और उपकरणों को इंसानों के सोचने के तरीके से कैसे जोड़ा जा सकता है? यह रोबोट द्वारा संभव है रोबोटिक्स इंजीनियरिंग, इंजीनियरिंग की एक शाखा है जिसमें रोबोट का डिजाइन, निर्माण और संचालन शामिल है। यह क्षेत्र इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर साइंस, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, मेक्ट्रोनिक्स, नैनो टेक्नॉलॉजी और बायोइंजीनियरिंग के साथ मिला हुआ बहुत ही रोचक इंजीनियरिंग क्षेत्र है। रोबोटिक्स इंजीनियरिंग के क्षेत्र में प्रवेश करने वाले छात्रों के लिए कम्प्यूटर, मैकेनिकल, इलेक्ट्रानिक्स तथा इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग का अध्ययन करने की आवश्यकता होती है। वास्तव में रोबोटिक्स कम्प्यूटर, मैकेनिकल, इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग के तालमेल का ही रूप है। इसलिए रोबोटिक्स में डिग्री हासिल करने के लिए इन विषयों का गहन ज्ञान अपेक्षित है। इसके अलावा पोस्टग्रेजुएट स्तर पर भी स्पेशलाइजेशन किया जा सकता है। रोबोटिक्स के अध्ययन में बेसिक इंजीनियरिंग प्रिसिपल तथा रोबोट्स का विकास तथा उपयोग करने वाले प्रोफेशनल की सहायता करने के लिए टेक्निकल स्किल्स सिखाई जाती है। इसमें डिजाइन में इंस्ट्रक्शन, ऑपरेशन टेस्टिंग, सिस्टम मैटेनेंस तथा रिपेयर शामिल है। रोबोटिक्स इंजीनियरिंग की वह शाखा है जिसके अंतर्गत रोबोट की डिजाइनिंग, उनका अनुरक्षण, नए एप्लिकेशन का विकास और अनुसंधान जैसे काम सम्मिलित किए जाते हैं। रोबोटिक्स में मेनिपुलेशन तथा प्रोसेसिंग के लिए कम्प्यूटर का उपयोग किया जाता है। रोबोटिक्स इंजीनियरिंग शाखा में बेसिक इंजीनियरिंग के सिद्धांत तथा रोबोट्स का विकास तथा उपयोग करने के लिए तकनीकी दक्षता सिखाई जाती है। इसमें डिजाइन इंस्ट्रक्शन, ऑपरेशन टेस्टिंग, सिस्टम मेंटेनेंस तथा रिपेयरिंग आदि शामिल हैं।

## विभिन्न प्रकार के रोबोटों और उसका उपयोग

दो भुजाओं वाले द्वि-अक्षीय रोबोट एक अत्याधुनिक रोबोटिक प्रणाली है, जो बड़े पैमाने पर द्रव पदार्थों के हस्तन, स्थानांतरण इत्यादि कार्यों को सटीकता से करने के लिए उपयुक्त है। यह रोबोटिक प्रणाली अनुसंधान के विविध क्षेत्रों जैसे की चिकित्सा, जीव विज्ञान, रसायन विज्ञान, औषधि विज्ञान आदि में उपयोग होने वाले कई प्रकार के द्रव पदार्थों के स्वचालित हस्तन को आसान बनाती है। खासकर, हानिकारक विषैले रासायनिक तरल पदार्थों के हस्तन में तो यह प्रणाली बहुत ही कारगर है। दो भुजाओं वाले रोबोट, जिन्हें मानव-भुजाओं जैसे कार्य करने के लिए डिजाइन किया गया है, द्वि-अक्षीय रोबोट जटिल प्रक्रियाओं को सहजता से बार-बार करने में सक्षम होना चाहिए। इसके अतिरिक्त, रोबोट स्थिर होना चाहिए और उसे उच्च-गति की प्रतिक्रिया प्रदर्शित करनी चाहिए। दो भुजाओं वाले रोबोट के रेखीय गति सिस्टम और क्रॉस रोलर रिंग रोबोट की स्थिरता और परिचालन गति को बढ़ाते हुए उनका आकार छोटा कर सकते हैं।

**3-एक्सिस रोबोट** : इस रॉबोट में तीन स्वतंत्र की कोटी तथा बल नियंत्रण हेतू, बल सेंसिग और नियंत्रण सेंसर लगे होते हैं 3-एक्सिस रोबोट स्वचालन रोबोटिक ऑटोमेशन सिस्टम 3-अक्ष वाले रोबोटों को नियुक्त करता है, जिसे क्षैतिज प्लास्टिक इंजेक्शन मोल्डिंग मशीनों पर प्लास्टिक

मोल्डिंग स्वचालन और उच्च गति की आवश्यकता वाले संचालन के लिए रोबोट के रूप में भी जाना जाता है। यह रॉबोट नियमित रूप से यंत्रों को परीक्षण (इन सर्विस इन्सपेक्शन) तथा रेडियोधर्मी अपशिष्ट को हटाने रेडियोसक्रिय तत्व को साधारण मानव की पहुँच से परे क्षेत्रों तक पहुंचाने के लिए अत्यधिक कारगर है। 3-अक्ष रोबोटों के स्वचालन में पार्ट पिकिंग और हैंडलिंग ऑटोमेशन, इन-मोल्ड डेकोरेटिंग/इन-मोल्ड लेबलिंग स्टैकिंग स्वचालन,पैकेजिंग और पैलेटाइजिंग स्वचालन,निरीक्षण स्वचाल ऑटोमेशन लोडिंग ऑटोमेशन अनुप्रयोग शामिल हैं।

## 5-जॉइंट क्लोज्ड-लिंक रोबोट

रोबोट के स्थिति-निर्धारण, गतिवर्धन और गति में कमी की सीमाबद्धताओं की मांग करते हैं। गाइडेंस अनुभाग में सटीकता और स्थिरता का होना आवश्यक है, और मूल संरचना को बल और तीव्रता में कमी का प्रदर्शन करना चाहिए। इस स्थिरता और गति को प्राप्त करने के लिए स्विंग अनुभाग में क्रॉस रोलर रिंग का उपयोग किया जाता है।

## 6-एक्सिस रोबोट

इसमें स्वनिर्धारित सॉफ्टवेयर द्वारा संचालित यंत्र, स्थिति, निर्धारक प्रणाली, एक मोटर चालित यंत्र कैमरा, दृष्टि सेंसर से युक्त छः अक्षीय निर्धारण प्रणाली लगी होती है। वस्तुतः यह रॉबोट स्वचालित निरीक्षण प्रणाली का भाग है। इसकी भुजाएं अपने स्थिति से दक्षिणावर्त या वामावर्त दिशा में स्वतंत्र रूप से 360° कोण तक घूम सकती है। इस रॉबोट में छः स्वतंत्र की कोटी तथा बल नियंत्रण हेतू, बल सेंसिग और नियंत्रण सेंसर (बल/आघूर्ण) लगे होते हैं। जो वास्तविक समय में इसके नियंत्रण को दर्शाते है। इससे रॉबोट समय समय पर अपने अक्ष के इर्द

### सॉफ्ट रोबोट

ऐसे रोबोट का शरीर सिलिकन (silicone) का होता है और इनमें एक लचीला प्रवर्तक, वायु मांसपेशियां (air muscles), विद्यत सक्रिय पोल्म्मेर (electroactive polymers) और फेरोफ्लुइड (ferrofluid)) भी होता है, अस्पष्ट तर्क (ब्रिल सवहपब) और न्युरोल नेटवर्क (neural networks) की सहायता से इन्हें नियंत्रित किया जाता है और ये सख्त संरचना वाले रोबोट से बहुत अलग दिखते हैं और साथ ही इनका व्यवहार भी काफी अलग होता है। बीटेक की डिग्री प्राप्त करने वाले छात्र रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में एमटेक कर आप उच्च अध्ययन करते हैं तो इस क्षेत्र में आपके प्रवेश की संभावना और अवसर दोनों ही बढ़ जाएंगे। बीएचईएल, बार्क तथा सीएआईआर जैसे संगठनों द्वारा फ्रेश ग्रेजुएटस को साइंटिस्ट के रूप में लेकर रोबोटिक्स के क्षेत्र में प्रशिक्षित किया जाता है। रोबोटिक्स विषय से परिचित होने के लिए सबसे पहले रोबोट की अवधारणा को समझना आवश्यक है। रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में रोबोटिक्स के निम्नलिखित विषय रोबोटिक्स की आधारशिला, रोबोट डायनामिक्स, रोबोट नियंत्रण, बहु रोबोट प्रणाली का मानव रोबोट बातचीत, संवेदनशील रोबोटिक अध्ययन करते है रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में स्पेशलाइजेशन से मैन्युफैक्चरिंग, कृषि, खनन, रक्षा परमाणु, ऊर्जा संयंत्र जैसे क्षेत्रों में कॅरियर हैं।

गिर्द घूमता है। इंटरनेट सॉफ्टवेयर के माध्यम से रॉबोट के बाहरी संगणक प्रणाली को नियंत्रित कया जाता हैं। जिससे इसका स्थान, (भुजा घुमने) कोण स्थानांतरण, पदार्थ को पकड़ने की क्रिया, स्थिति निर्धारण आदि की जानकारी डाटा प्रेक्षण के माध्यम से मिलती है छः अक्षीय रॉबोट की सटीकता एवं विश्वसनीयता काफी अच्छी है यह एक ही बार में 360° यानि भुजाओं को बांए से दांये तथा दाएं से बाएं मोड़ने में सक्षम है। अंतरिक्ष में दूरहस्तन, स्थानांतरण, पदार्थों के निरीक्षण हेतु यह एक कारगर रॉबोट कहा जा सकता है यह रॉबोट अपनी भुजाओं को मोडकर अपने दांतों से पदार्थ को चतुराई से पकड़ लेने की क्षमता रखता है।

- एक्सिस 1 - रोबोट को घुमाता है (रोबोट के आधार पर)।
- एक्सिस 2 - रोबोट के निचले हाथ का फॉरवर्ड/बैक एक्सटेंशन।
- एक्सिस 3 - रोबोट की ऊपरी भुजा को ऊपर उठाता/कम करता है।
- एक्सिस 4 - रोबोट की ऊपरी भुजा (रिस्ट रोल) को घुमाता है।
- एक्सिस 5 - रोबोट की बांह की कलाई को ऊपर उठाता/कम करता है
- एक्सिस 6 - रोबोट की बांह की कलाई को घुमाता है।

## आर्क वेल्डिंग रोबोट

आर्क वेल्डिंग रोबोट में जोड़ों के घूर्णन गति अनुभाग में, कारखानों में क्रमबद्ध उत्पादन के समय, क्रॉस रोलर रिंग का उपयोग किया जाता है। चूँकि अकेले क्रॉस रोलर रिंग ही रेडियल और अक्षीय मोमेन्ट के प्रत्येक भार की दिशा में पर्याप्त रूप से स्थिर रहते हैं, इसलिए रोबोट के कॉम्पैक्ट जोड़ बनाने के लिए उनका उपयोग किया जा सकता है।

## स्केलर रोबोट

स्केलर रोबोट का उपयोग, छोटे क्षेत्रों में प्रक्रिया में काम आने वाली वस्तुओं को पहुँचाने और उनको उपयुक्त स्थान पर रखने के लिए किया जाता है। उनकी उच्च सटीकता के लिए, स्ट्रोक संचलन और घूर्णन, गाइड सिस्टम का होना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

## क्षेत्र

रोबोटिक्स इंजीनियरिंग एक अल्पकालीन क्षेत्र नहीं है, बल्कि यह एक दीर्घकालीन अनुसंधानपरक कॅरियर है। इस क्षेत्र में कुछ इंजीनियरिंग संस्थानों द्वारा आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, रोबोटिक्स, एडवांस्ड रोबोटिक्स सिस्टम्स, इंटेलिजेंस कंट्रोल, इमेजिंग प्रोसेस, न्यूरल नेटवर्क्स तथा फुजी लॉजिक्स पर विशेष कोर्स संचालित किए जाते हैं। आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस शाखा के अंतर्गत कृत्रिम बुद्धि का अध्ययन किया जाता है। यह रोबोटिक्स कम्प्यूटर विज्ञान की वह शाखा है, जिसमें यह सीखा जाता है कि कम्प्यूटर में आदमी जैसी बुद्धि कैसे आए। ऑटोमेशन एंड रोबोटिक्स एक मल्टीडिसिप्लिनरी फील्ड है, जिसमें कम्प्यूटर साइंस, न्यूरोसाइंस, मनोविज्ञान आदि विषय भी शामिल किए जाते हैं। कृत्रिम बुद्धि का उद्देश्य ऐसे कम्प्यूटर प्रोग्राम बनाना होता है, जो समस्याओं को हल कर सकें। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस विभिन्न क्षेत्रों संज्ञानात्मक मनोविज्ञान, भाषा विज्ञान, कम्प्यूटिंग विज्ञान, तर्क, दर्शन का एक संयोजन है। रोबोटिक्स के क्षेत्र में कॅरियर बनने हेतु 12वीं कक्षा में भौतिक एवं गणित विषय होना नितांत आवश्यक है। इसके साथ ही साथ उच्चतम प्रतियोगी तथा तकनीकी क्षेत्र में आविष्कार तथा कुछ नया करने के लिए सृजनात्मक योग्यता भी बेहद जरूरी है। रोबोटिक्स के क्षेत्र में कैरियर बनाने वालों को सबसे पहले यह करना होगा कि वह कम्प्यूटर, आईटी, मेकेनिकल, इलेक्ट्रॉनिक्स अथवा इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग में बीई या बीटेक की डिग्री प्राप्त करें। बीई या बीटेक की डिग्री प्राप्त करने वाले छात्र रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में एमटेक कर आप उच्च अध्ययन करते हैं तो इस क्षेत्र में आपके प्रवेश की संभावना और अवसर दोनों ही बढ़ जाएंगे। हो सकता है कि इस क्षेत्र में आज प्रवेश करने वालों को अपनी मंजिल तक पहुँचने में कुछ साल इंतजार करना पड़े। बार्क, बीएचईएल, तथा सीएआईआर जैसे संगठनों द्वारा फ्रेश ग्रेजुएटस को साइंटिस्ट के रूप में लेकर रोबोटिक्स के क्षेत्र में प्रशिक्षित किया जाता है। रोबोटिक्स विषय से परिचित होने के लिए सबसे पहले रोबोट की अवधारणा को समझना आवश्यक है।

## अवसर

वर्तमान में विभिन्न क्रियाकलापों में रोबोटों का उपयोग निरंतर बढ़ता ही जा रहा है इसलिए इस क्षेत्र में रोजगार के बहुत उजले अवसर विद्यमान हैं। रोबोटिक्स को सामान्यतः चार वर्गों में बाँटा जा सकता है। ये हैं- औद्योगिक रोबोट, पर्सनल रोबोट, मेडिकल या सर्जिकल रोबोट तथा ऑटोनोमस रोबोट। इनमें सबसे बड़ी श्रेणी औद्योगिक रोबोटों की होती है, जो साधारण प्रोग्राम योग्य रोबोट होते हैं, जिनका इस्तेमाल मैन्युफैक्चरिंग संयंत्रों में बहुतायात में होता है। उद्योगों में रोबोट्स का उपयोग निर्माण प्रक्रिया को तेज करने के लिए किया जाता है। औद्योगिक रोबोट्स द्वारा वेल्डिंग, पेंटिंग तथा मशीनों में कलपुर्जे लगाने का काम किया जाता है। रोबोट्स असेम्बलिंग, कटिंग तथा ऑटोमोबाइल्स के विभिन्न पार्ट्स को लगाने का काम भी बड़ी कुशलता एवं दक्षता से करते हैं। एटॉमिक, थर्मल तथा न्यूक्लियर पॉवर स्टेशनों पर खतरनाक एवं जोखिम वाले तत्वों की साज-संभाल तथा मेंटेनेंस में भी इंसानों के बजाय रोबोटों का प्रयोग बढ़ा है। अब मिलिट्री ऑपरेशंस में भी रोबोट दिखाई देने लगे हैं।

## अध्ययन

रोबोटिक्स के तहत रोबोटिक्स के गणितीय आधार और रोबोट सिस्टम में प्रसंस्करण सेंसर जानकारी के सिद्धांतों का अध्ययन करते हैं। रोबोट नियंत्रण प्रणाली, बहु रोबोट प्रणाली विषय में मूलाधार और रोबोट के सिद्धांतों, कम्प्यूटेशनल वस्तुओं और गति के मॉडल, रोबोट की यांत्रिकी, जोड़तोड़ प्रणाली की संरचना, योजना और रोबोट कार्यों की प्रोग्रामिंग विषय शामिल हैं। काइनेमेटिक्स यांत्रिकी की एक शाखा है, जो गति के कारण बनने वाले बलों बिंदुओं, निकायों (वस्तुओं) और निकायों की प्रणाली (वस्तुओं के समूह) की गति का वर्णन करती है। महत्वपूर्ण विषयों में भी गतिशीलता, सेंसर और प्रेरक डिजाइन, नियंत्रण और रोबोट के गति और सिमुलेशन के लिए हैं। रोबोट पर लगे कैमरों द्वारा और ऑप्टिकल प्रवाह सेंसर, सेंसर सिग्नल प्रोसेसिंग, बहु सेंसर नियंत्रण प्रणाली और इष्टतम आकलन से संबंधित संभाव्य अवधारणा इसमें शामिल है।

## कोर्स

- रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में बीई/बीटेक
- ऑटोमेशन और रोबोटिक्स में बीटेक
- स्वचालन और रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में बीटेक
- आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस में बीएससी
- रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में एमटेक
- स्वचालन और रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में एमई/एमटेक

## मुख्य विषय

बीटेक रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में मुख्य विषयों के रूप में इलेक्ट्रॉनिक, बेसिक इलेक्ट्रॉनिक्स और कम्प्यूटर्स इलेक्ट्रॉनिक्स, माप और उपकरण संचार प्रणाली, माइक्रोप्रोसेसरों और माइक्रोप्रोसेसर माइक्रोकंट्रोलर, हाइड्रोलिक न्यूमेरिकल कंट्रोल इंजीनियरिंग, इलेक्ट्रो-मैकेनिकल एनर्जी, डीसी मशीन, माइक्रोकंट्रोलर और पीएलसी कम्प्यूटर एडेड डिजाइन औरविनिर्माण यांत्रिकी इंजीनियरिंग, कीनेमेटीक्स, उन्नत रोबोटिक्स मैन्युफैक्चरिंग इंजीनियरिंग मोटर नियंत्रण और पीएलसी इलेक्ट्रोनिक उपकरण औरडिजिटलसर्किट, पावर इलेक्ट्रॉनिक्स और मोटर्स,मशीन डिजाइन, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, औद्योगिक स्वचालन और मोबाइल रोबोटिक आदि हैं।

मोबाइल रोबोट, सक्रिय सेंसर प्लेटफार्मों और अन्य सभी कम्प्यूटर नियंत्रित विज्ञान सम्बन्धी लिंकेज सिमुलेशन व कंट्रोल के लिए लागू होते हैं।

## अनुप्रयोग

रोबोट कार्यक्रम के प्राथमिक अनुप्रयोगों के तहत प्रतिनिधि रोबोट की प्रोग्रामिंग हो, रोबोट और मोबाइल रोबोट प्रयोगशाला परियोजनाओं में रोबोट कार्यों की प्रोग्रामिंग के लिए हैं। एक सर्वे के मुताबिक यूनाइटेड किंगडम में मौजूदा नौकरियों में से अगले पंद्रह सालों में करीब पच्चीस फीसदी सर्विस सेक्टर के क्षेत्र में मैनपावर के लिए कारखानों में रोबोट काम कर सकते है एक अन्य रिपोर्ट के मुताबिक ब्रिटेन में भविष्य में सर्विस सेक्टर के कई प्रकार के जॉब्स में इंसान की जगह रोबोट काम करते हुए दिख सकते हैं, जो अर्थव्यवस्था के लिए एक नयी चुनौती पैदा कर सकते हैं। आमतौर पर लोगों का जिन रोबोटों से सामना हुआ है उनके बारे में लोगों के विचार सकारात्मक हैं घरेलू रोबोट (Domestic robot) सफाई और रखरखाव के काम के लिए घरों के आस पास आम होते जा रहे हैं इस तरह तकनीक के विकास के साथ कम मैनपावर में ज्यादा काम कर पाना संभव हो पाया है नासा ने रोबोनॉट 2 का निर्माण किया है रोबोनॉट 2 का उपयोग अंतरिक्ष-स्टेशन में साथ-साथ दवा और उद्योग के किया जा सकता है। अमरीकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा ने घोषणा कि है रोबोनॉट-2 नाम के एक रोबोट को अंतरिक्ष में भेजा जाएगा। वह अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन पर तैनात वैज्ञानिकों की मदद करेगा। कालोनी, चींटी और मक्खियों के समूह से प्रेरित होकर अनुसन्धानकर्ताओं ने हजारों सूक्ष्म रोबोटों को बनाया जो मिलकर एक कार्य करते हैं, जैसे की कुछ छुपी हुई चीज ढूंढ़ना, साफ करना या जासूसी करना। विभिन्न उद्योगों में रोबोट का उपयोग, व्यापक रूप से विनिर्माण, गठरी लादने, परिवहन, पृथ्वी और अन्तरिक्षीय खोज, एयरोस्पेस, आर्क वेल्डिंग, सर्जरी, हथियारों के निर्माण, प्रयोगशाला अनुसंधान , उपभोक्ता और औद्योगिक उत्पादन के लिए किया जा रहा है। कुछ रोबोट लाम्बिक संचलन तक ही सीमित नहीं होते, उनमें रोबोट के पुरजों को बहुत से जोड़ों के साथ जोड़ा जाता है, रोबोटिक्स इंजीनियर रोबोट के डिजाइन और निर्माण के लिए जिम्मेदार होता है।

## अध्ययन

रोबोटिक्स के तहत रोबोटिक्स के गणितीय आधार और रोबोट सिस्टम में प्रसंस्करण सेंसर जानकारी के सिद्धांतों का अध्ययन करते है. रोबोट नियंत्रण प्रणाली, बहु रोबोट प्रणाली विषय में मूलाधार और रोबोट के सिद्धांतों, कम्प्यूटेशनल वस्तुओं और गति के मॉडल, रोबोट की यांत्रिकी, जोड़तोड़ प्रणाली की संरचना, योजना और रोबोट कार्यों की प्रोग्रामिंग विषय शामिल हैं। रोबोट का गति कीनेमेटीक्स और रोबोट तंत्र की प्रोग्रामिंग पर है। काइनेमेटिक्स यांत्रिकी की एक शाखा है, जो गति के कारण बनने वाले बलों बिंदुओं, निकायों (वस्तुओं) और निकायों की प्रणाली (वस्तुओं के समूह) की गति का वर्णन करती है। महत्वपूर्ण विषयों में भी गतिशीलता, सेंसर और प्रेरक डिजाइन, नियंत्रण और रोबोट के गति और सिमुलेशन के लिए हैं। रोबोट पर लगे कैमरों द्वारा और ऑप्टिकल प्रवाह सेंसर, सेंसर सिग्नल प्रोसेसिंग, बहु सेंसर नियंत्रण प्रणाली और इष्टतम ऑकलन से संबंधित संभाव्य अवधारणा इसमें शामिल है। इसके लिए रोबोट के सेंसर/बहु सेंसर नियंत्रण या

## योग्यता

रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में ग्रेजुएशन (BE/BTech) करने के लिए फिजिक्स, कैमिस्ट्री और मैथ्स विषयों में 60 प्रतिशत अंकों के साथ 12वीं आवश्यक है। जेईई/सीईटी के माध्यम से मेरिट सूची के आधार पर विभिन्न इंजीनियरिंग कॉलेज में रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में ग्रेजुएशन (BE/BTech) का कोर्स ज्वाइन किया जाता है। अगर अभ्यर्थी के पास रोबोटिक्स में डिप्लोमा योग्यता है तो वह रोबोटिक्स इंजीनियरिंग के ग्रेजुएशन कोर्स (BE/Btech) में दाखिला ले सकते कोई कॉलेज विशेष रूप से रोबोटिक्स में बीटेक डिग्री प्रदान करता है, तो कुछ संस्थान एमटेक कराता हैं, आईआईटी जो छात्रों को रोबोटिक्स इंजीनियरिंग में कैरियर की दिशा में सर्वोत्तम मार्ग प्रदान करती हैं।

## वेतन

एक रोबोटिक्स इंजीनियर को शुरुआत में प्राइवेट सेक्टर में 10 से 12 लाख का वार्षिक पैकेज मिल जाता है, जबकि सरकारी नौकरी मिलने पर शुरुआत में करीब 50-70 हजार रुपए मासिक और इन्सेन्टिव मिलता है।

## प्रमुख संस्थान

- दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली,
- आई आई एस, बैंगलोर
- एनआईटी, वारंगल।
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुंबई
- हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद ।
- अरोरा ग्रुप ऑफ इंस्टीट्यूशंस, हैदराबाद
- द नियोतिया यूनिवर्सिटी, कोलकाता
- चंडीगढ़ विश्वविद्यालय, चंडीगढ़
- बिट्स, हैदराबाद
- बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुंबई
- दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
- मद्रास विश्वविद्यालय, चेन्नई
- इंडियन स्कूल ऑफ माइंस, धनबाद
- जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नईदिल्ली
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर
- आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और रोबोटिक्स प्रौद्योगिकी संस्थान, बंगलोर
- राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, पटना
- बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी एण्ड साइंस, पिलानी
- जादवपुर विश्वविद्यालय, कोलकाता
- पीएसजी कॉलेज, कोयम्बटूर
- श्री सत्य साई इंस्टिट्यूट, चेन्नई
- एसआरएम विश्वविद्यालय, कांचीपुरम
- बिट्स, मेसरा
- पेट्रोलियम एंड एनर्जी स्टडीज विश्वविद्यालय, देहरादून

**goswamisanjay80@gmail.com**

# वर्ष का अंतिम
# सुपरमून और आकाशगंगा दर्शन

इरफान ह्यूमन

6 मार्च को नव चन्द्र (New Moon) होगा। इस दिन चंद्रमा सूर्य की तरह पृथ्वी के एक ही तरफ स्थित रहेगा और रात्रि आकाश में दिखाई नहीं देगा। यह चन्द्रकला 16:04 UTC (Coordinated Universal Time) पर दिखाई देगी। यह आकाशगंगाओं और तारा समूहों जैसी धुंधली वस्तुओं का निरीक्षण करने के लिए इस माह का का सबसे अच्छा समय है क्योंकि इन्हें देखने के लिए चांदनी बाधा नहीं बनेगी।

आकाशगंगा, मिल्की वे, क्षीरमार्ग या मन्दाकिनी हमारी गैलेक्सी को कहते हैं, जिसमें पृथ्वी और हमारा सौर मण्डल स्थित है। हमारी आकाशगंगा आकृति में एक सर्पिल (Spiral) गैलेक्सी है, जिसका एक बड़ा केंद्र है और उस से निकलती हुई कई वक्र भुजाएँ। हमारा सौर मण्डल इसकी ओरायन-सिग्नस भुजा पर स्थित है। आकाशगंगा में सौ अरब से चार सौ अरब के बीच तारे हो सकते हैं और अनुमान लगाया जाता है कि इनके लगभग पचास अरब भी होंगे, जिनमें से पचास करोड़ अपने तारों से जीवन-योग्य तापमान रखने की दूरी पर हैं। एक अध्ययन के अनुसार आकाशगंगा में तारों की संख्या से दुगने ग्रह हो सकते हैं।

नासा की शक्तिशाली हब्बल टेलिस्कोप ने अंतरिक्ष की कई आकाशगंगाओं की तस्वीरें लेने का अद्‌भुत काम किया है। कई आकाशगंगाएं इतनी दूर हैं कि उनका प्रकाश हम तक पहुँचने में लाखों साल का समय लग जाता है। इससे जाहिर है कि हम उस आकाशगंगा को लाखों साल पहले की अवस्था में देख रहे होते हैं। पिनव्हील गैलक्सी का ही उदाहरण देखिए, इसे मेसियर 101 भी कहते हैं। यह पृथ्वी से 2.5 करोड़ प्रकाश वर्ष की दूरी पर स्थित है। इस आकाशगंगा के एक कोने पर स्थित तारे की दूरी दूसरे कोने पर स्थित तारे से 1.7 लाख प्रकाश वर्ष है। माना जाता है कि इसमें करीब एक खरब तारे मौजूद हैं।

इससे कुछ ही दूर सोमब्रेरो गैलेक्सी है, जिसे एम 104 भी कहते हैं। यह करीब 2.8 करोड़ प्रकाश वर्ष की दूरी पर स्थित है। इस आकाशगंगा का फैलाव करीब पचास हजार प्रकाश वर्ष है और इसका आकार आठ सौ अरब सूर्यों के आकार जितना है। ये दोनों सर्पिल आकार की आकाशगंगाएं हैं, इन्हें एंटेने आकाशगंगा भी कहते हैं। ये एक समय में एक दूसरे से अलग हो गई थीं, लेकिन बाद में एक दूसरे को गुरुत्व से खींचने लगीं। ये पृथ्वी से 4.5 करोड़ प्रकाश वर्ष दूर हैं और आपस में टकराने वाली आकाशगंगाओं में सबसे नजदीक हैं। यह सर्पिली आकार की आकाशगंगा (एनजीसी 6503) ब्रह्मांड के एक काफी बड़े खाली से दिखने वाले क्षेत्र में स्थित हैं। इसे उस क्षेत्र का शून्य भी

*डॉ. इरफान ह्यूमन विगत पच्चीस वर्षों से 'साइंस न्यूज एण्ड व्यूज़' मासिक विज्ञान पत्रिका का संपादन व प्रकाशन कर रहे हैं। आप विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के माध्यम से देशभर में वैज्ञानिक जागरुकता के लिए प्रयासरत हैं। आपके एक हजार से अधिक लेख प्रकाशित हुए हैं, आकाशवाणी से अनेक विज्ञानवार्ताओं का प्रसारण हुआ है, विज्ञान धारावाहिक लेखन तथा विज्ञान डाक्यूमेंट्री फिल्मों के निर्माण में आपका बड़ा योगदान है। मुंबई में साइंस फिल्म फेस्टिवल आपकी फिल्में प्रदर्शित हुई हैं। विज्ञान लेखन तथा विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए आपको कई सम्मान प्राप्त हैं तथा कई वैज्ञानिक संस्थाओं के मानद हैं। वर्तमान में आप शाहजहाँपुर उ.प्र. में निवासरत हैं।*

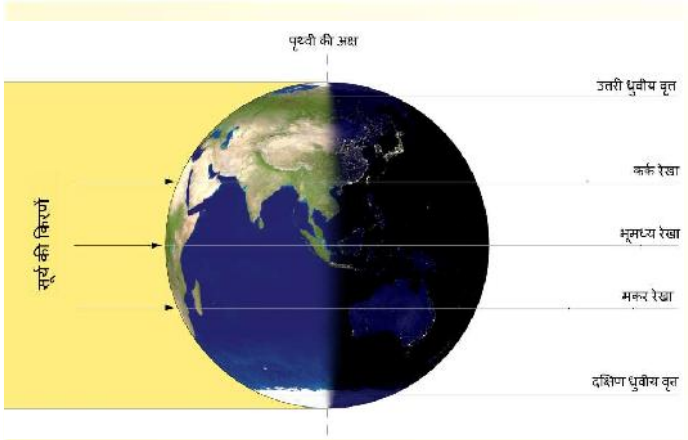


कहते हैं और ये पृथ्वी से 1.8 करोड़ प्रकाशवर्ष दूर है। ये तारा-विहीन अंधकार के पंद्रह करोड़ प्रकाशवर्ष तक फैले क्षेत्र में इकलौती ज्ञात आकाशगंगा है।

पुणे स्थित इंटर यूनिवर्सिटी सेंटर फॉर एस्ट्रोनॉमी एंड एस्ट्रोफिजिक्स, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एजुकेशन एंड रिसर्च और दो अन्य भारतीय यूनिवर्सिटी के सदस्यों ने विशालकाय आकाशगंगा के मौजूद होने की बात कही है। यह आकाशगंगा धरती से चार सौ करोड़ प्रकाश वर्ष दूर है और करीब दस अरब वर्ष से अधिक पुरानी है। एक सुपरक्लस्टर में 40 से 43 क्लस्टर शामिल होते हैं, जिसके एक क्लस्टर में लगभग एक हजार से दस हजार गैलेक्सी होती हैं। इनका आकार अरबों सूर्यों के बराबर होता है। इंटर यूनिवर्सिटी सेंटर फॉर एस्ट्रोनॉमी एंड एस्ट्रोफिजिक्स के निदेशक सोमक रायचौधरी के अनुसार छह अंतरिक्ष विज्ञानियों की टीम ने आकाशगंगाओं की एक बड़ी चेन की खोज की है जो नज़र आने वाली आकाशगंगा में सबसे बड़ी संरचना हो सकती हैं।

## जब दिन-रात होंगे बराबर

20 मार्च को मार्च विषुव (इक्विनॉक्स या नॉर्थवर्ड इक्विनॉक्स) की घटना घटित होगी। मार्च विषुव 21:58 UTC (Coordinated Universal Time) पर होता है। इस घटना में सूर्य सीधे भूमध्य रेखा (Equator) पर चमकता दिखाई देगा और दुनिया भर में दिन और रात के लगभग बराबर होंगे। यह उत्तरी गोलार्द्ध में वसंत का पहला दिन (vernal equinox) भी होता है और दक्षिणी गोलार्द्ध में पतझड़ अर्थात शरद ऋतु विषुव (Autumnal equinox) का पहला दिन भी। अर्थात उत्तरी गोलार्द्ध में वसंत की शुरुआत और सर्दियों के अंत को चिह्नित करने के लिए मार्च विषुव को लिया जा सकता है लेकिन दक्षिणी गोलार्द्ध में शरद ऋतु की शुरुआत और गर्मियों की समाप्ति को चिह्नित करता है। ग्रेगोरियन कैलेंडर पर, नॉर्थवर्ड इक्विनॉक्स 19 मार्च की शुरूआत या 21 मार्च तक देर से हो सकता है। एक सामान्य वर्ष के लिए गणना किए गए समय में कमी पिछले वर्ष की तुलना में 5 घंटे 49 मिनट बाद है, और पिछले वर्ष की तुलना में लगभग 18 घंटे 11 मिनट पहले लीप वर्ष के लिए है। खगोल विज्ञान में, मार्च विषुव काल के नाक्षत्र समय का शून्य बिंदु माना जाता है।

विषुव (इक्विनॉक्स) ऐसा समय-बिंदु होता है, जिसमें दिवस और रात्रि लगभग बराबर होते हैं। इसका शब्दिक अर्थ होता है-समान। किसी क्षेत्र में दिन और रात की लंबाई को प्रभावित करने वाले कई दूसरे कारक भी होते हैं। पृथ्वी अपनी धुरी पर 23.5 डिग्री झुके हुए सूर्य के

चक्कर लगाती है, इस प्रकार वर्ष में एक बार पृथ्वी इस स्थिति में होती है, जब वह सूर्य की ओर झुकी रहती है, व एक बार सूर्य से दूसरी ओर झुकी रहती है। इसी प्रकार वर्ष में दो बार ऐसी स्थिति भी आती है, जब पृथ्वी का झुकाव न सूर्य की ओर ही होता है और न ही सूर्य से दूसरी ओर, बल्कि बीच में होता है। इस स्थिति को विषुव या इक्विनॉक्स कहा जाता है। इन दोनों तिथियों पर दिन और रात की बराबर लंबाई लगभग बराबर होती है। यदि दो लोग भूमध्य रेखा से समान दूरी पर खड़े हों तो उन्हें दिन और रात की लंबाई बराबर महसूस होगी। ग्रेगोरियन वर्ष के आरंभ होते समय (जनवरी माह में) सूरज दक्षिणी गोलार्द्ध में होता है और वहां से उत्तरी गोलार्द्ध को अग्रसर होता है। वर्ष के समाप्त होने (दिसम्बर माह) तक सूरज उत्तरी गोलार्द्ध से होकर पुनः दक्षिणी गोलार्द्ध पहुँच जाता है। इस तरह से सूर्य वर्ष में दो बार भू-मध्य रेखा के ऊपर से गुजरता है।

## अन्तिम सुपरमून

21 मार्च को पूर्णिमा, सुपरमून की घटना घटित होगी। चंद्रमा सूर्य की तरह पृथ्वी के विपरीत दिशा में स्थित होगा और उसकी कला पूरी तरह से प्रकाशमान (Illuminated) होगी। यह चरण 01:43 यूटीसी पर होगा। इस चंद्रमा को पूर्ण क्रो (Crow ) मून, पूर्ण क्रस्ट (Crust) चंद्रमा, पूर्ण सैप (Sap) चंद्रमा और लेंटेन चंद्रमा के रूप में भी जाना जाता है। यह 2019 के लिए तीन सुपरमून का अंतिम भी है। इस खगोलीय घटना में चंद्रमा पृथ्वी के सबसे करीब पहुँच जाएगा और सामान्य से थोड़ा बड़ा और चमकीला दिखाई दे सकता है। सुपरमून कोई खगोलीय शब्द नहीं है, ये शब्द आधुनिक ज्योतिष की देन है। ऐसा माना जाता है कि इस दौरान समुद्र में ज्वार आने के साथ साथ उन चट्टानों में भी ज्वार आता है। इस कारण भूकंप की घटना होती है, लेकिन इसका कोई वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। साल भर में बारह से तेरह बार पूर्णिमा या नए चाँद दिखने की घटना होती है, जिसमें से मात्र तीन या चार को ही सुपरमून के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

## माह की खोज

4 मार्च, 1977 में पहला फ्रीओन कूल्ड क्रे-1 सुपर कम्प्यूटर लॉस अलामोस लैबोरेट्री में स्थापित किया गया, जिसका उपयोग रक्षा उद्योग को अत्याधुनिक हथियार प्रणाली बनाने में मदद करने के लिए किया गया था। इस प्रणाली में 133 मेगाफ्लॉप्स का चरम प्रदर्शन था और इसमें नवीनतम तकनीक, एकीकृत सर्किट और वेक्टर रजिस्टर तकनीक का उपयोग किया गया था। क्रे-1 पहले या बाद में अन्य किसी कंप्यूटर की तरह नहीं दिखता

था। यह एक बेलनाकार मशीन थी जो सात फीट लंबी और नौ फीट व्यास की थी, जिसका वजन तीस टन था और इसे बिजली के साथ बिजली प्रदान करने के लिए अपने स्वयं के विद्युत सबस्टेशन की आवश्यकता थी। इसके आविष्कारक, सेमुर क्रे, एक ऑटो दुर्घटना में 5 अक्टूबर, 1996 को मारे गए। उनके नवाचारों में वेक्टर रजिस्टर प्रौद्योगिकी, शीतलन प्रौद्योगिकी और चुंबकीय एम्पलीफायरों शामिल थे।

यदि वर्तमान की बात करें तो शोधकर्ताओं के एक दल ने दुनिया के पाँच सबसे तेज सुपरकम्प्यूटरों की सूची जारी की है। इनमें चीन के तियान्हे-2 को दुनिया का सबसे तेज सुपरकम्प्यूटर बताया गया है। नई सूची में दूसरे और तीसरे नंबर पर अमेरिका का टाइटन और सिक्वोया रहे जबकि जापान का 'के कम्प्यूटर' दुनिया का चौथा सबसे तेज सुपर कम्प्यूटर है। यह सूची साल में दो बार जारी की जाती है। ताज़ा सूची मैनहाइम यूनीवर्सिटी में कम्प्यूटर साइंस के प्रोफेसर हैंस मियुर की देखरेख में तैयार की गई है। सुपर कम्प्यूटर की गति मापने वाली संस्था लिनपैक बेंचमार्क के अनुसार तियान्हे-2 सुपर कम्प्यूटर 33.86 पेटाफ्लॉप प्रति सेकंड की गति से चलता है। इसका मतलब है कि ये सुपर कम्प्यूटर एक सेकंड में 33 हजार 860 ट्रिलियन कैलकुलेशन करता है। चीनी सरकार के अनुसार इसे दक्षिण पूर्वी प्रांत ग्युआनडॉग के ग्युआंगजो शहर में मौजूद नेशनल सुपर कम्प्यूटर सेंटर में स्थापित किया गया है।

## जैव विविधता पर संकट

भारत की पारिस्थितिक व भौगोलिक दशाओं में विविधता पायी जाती है और हमारा देश विश्व में महा जैवविविधता की श्रेणी में आता है। संपूर्ण विश्व में कुल जीव-जंतुओं के 15,00000 ज्ञात प्रजातियों में से लगभग 81,000 प्रजातियां भारत में मिलती हैं। देश में स्वच्छ और समुद्री जल की मछलियों की 2500 प्रजातियां हैं। भारत में पक्षियों की 1200 प्रजातियां तथा 900 उप-प्रजातियां पायी जाती हैं। अफ्रीकी, यूरोपीय एवं दक्षिण-पूर्वी एशियाई जैव-तंत्रों के संगम पर अवस्थित होने के कारण भारत में इनमें से प्रत्येक जैव-तंत्र के तरह-तरह के प्राणी भी पाये जाते हैं। उल्लेखनीय है कि 20 दिसंबर, 2013 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने अपने 68 वीं महासभा में वन्यजीवों की सुरक्षा के प्रति लोगों को जागरूक करने एवं लुप्तप्राय प्रजाति के प्रति जागरूकता बढ़ाने हेतु 3 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व वन्यजीव दिवस (World Wildlife Day) मनाने की घोषणा की थी।

जैव प्रजातियों को विलोपन से बचाने के उद्देश्य से प्रकृति और पृथ्वी की जैव विविधता के स्तरों का वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक है। वर्ष 1978 में ला जोला, कैलिफोर्निया स्थित कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में आयोजित सम्मेलन में वैज्ञानिकों के बीच उष्णकटिबंधीय वनों की कटाई, लुप्त होने वाली प्रजातियों और प्रजातियों के भीतर क्षतिग्रस्त आनुवंशिक विविधता पर चिंता से उभरी। परिणत सम्मेलन और कार्यवाहियों ने एक ओर उस समय के पारिस्थितिकी सिद्धांत और जीव-समुदाय जैविकी के बीच मौजूद अंतराल को पाटने और दूसरी ओर संरक्षण नीति और व्यवहार की मांग की। जैव विविधता के अनेक संकट, जिनमें जलवायु परिवर्तन और कई रोग शामिल हैं, कुछ अन्य भी हैं जैसे वनों की कटाई, अधिक चराई, काटना-और-जलाना कृषि, शहरी विकास, वन्य-जीवन व्यापार, प्रकाश प्रदूषण और कीटनाशकों का उपयोग। यहाँ जलवायु परिवर्तन को अक्सर एक गंभीर खतरे के रूप में उद्धृत किया जाता है। वैश्विक तापन (Global warming) का प्रभाव वैश्विक जैविक विविधता की बड़े पैमाने पर विलुप्ति की दिशा में विपत्तिपूर्ण ख़तरा जोड़ता है। अनुमान लगाया जा रहा है कि वर्ष 2050 तक सभी प्रजातियों के लिए विलुप्त होने के खतरे को 15 से लेकर 37 प्रतिशत के बीच या अगले पचास वर्षों में सभी प्रजातियों के पचास प्रतिशत होने का अनुमान लगाया गया है। प्राकृतिक-वास विखंडन बहुत कठिन चुनौतियों में से एक है, क्योंकि संरक्षित क्षेत्रों के वैश्विक नेटवर्क पृथ्वी की सतह के केवल 11.5 प्रतिशत को आवृत्त करते हैं। लुप्तप्राय वन्यजीव प्रजातियां, ऐसे जीवों की आबादी है, जिनके लुप्त होने का जोखिम है, क्योंकि वे या तो संख्या में कम है, या बदलते पर्यावरण या परभक्षण मानकों द्वारा संकट में हैं। साथ ही, यह वनों की कटाई के कारण भोजन या पानी की कमी को भी द्योतित कर सकता है। प्रकृति के संरक्षणार्थ अंतर्राष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ (IUCN), जो अपने संक्षिप्त प्रयोजनों के लिए सभी प्रजातियों को वर्गीकृत करता है, ने वर्ष 2006 के दौरान मूल्यांकन किए गए प्रजातियों के नमूने के आधार पर, सभी जीवों के लिए लुप्तप्राय प्रजातियों की प्रतिशत की गणना चालीस प्रतिशत के रूप में की है। कई देशों में संरक्षण निर्भर प्रजातियों के रक्षणार्थ कानून बने हैं।

## पाई का मान

ज्यामिती में किसी वृत्त की परिधि की लंबाई और व्यास की लंबाई के अनुपात को पाई कहा जाता है। प्रत्येक वृत्त में यह अनुपात 3.141 होता है, लेकिन दशमलव के बाद की पूरी संख्या का अब तक आंकलन नहीं किया जा सका है, इसलिए इसे अनंत माना जाता है। आर्यभट्ट ने इसके सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए संस्कृत में लिखा है-चतुराधिकं शतमष्टगुणं द्वाषष्टिस्तथा सहस्त्राणाम्। अयुतद्वयस्य विष्कम्भस्य आसन्नौ वृत्तपरिणाहः।।

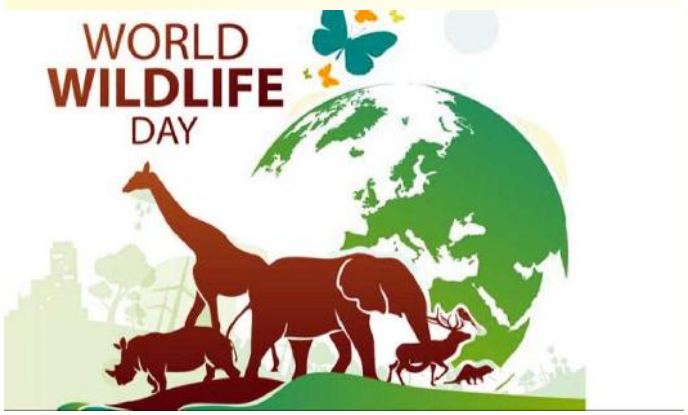


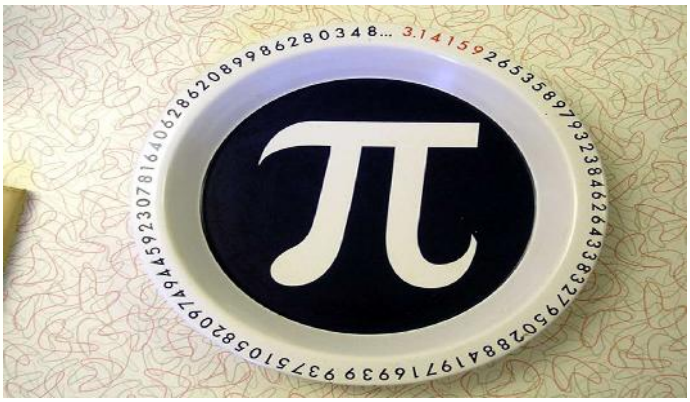

पाई का अधिकतर उपयोग ज्यामिति में होता है। गणित, विज्ञान और अभियांत्रिकी के कई महत्त्वपूर्ण फॉर्मूले इस पर आधारित हैं। प्रत्येक वृत्त में यह अनुपात 3.141 होता है लेकिन दशमलव के बाद की पूरी संख्या का अब तक आंकलन नहीं किया जा सका है इसलिए इसे अनंत माना जाता है। पाई के इतिहास में जाएं तो पाएंगे कि यह निर्विवाद सत्य है कि पाई के सिद्धान्त के प्रतिपादक आर्यभट्ट थे। इसके बावजूद आर्कीमीडिज से लेकर न्यूटन तक, सबने पाई के बारे में खोज कर अपने-अपने मान दुनिया के सामने रखे थे। भारत के एक अन्य गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त भी पाई की खोज को एक नई ऊंचाई तक ले गए। माना जाता है कि मिस्र के पिरामिड का निर्माण करने वालों को पाई का ज्ञान था। हालांकि इसका कोई लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं है। 14 मार्च को पाई दिवस (Pi Day) मनाया जाता है।

100 में चार जोड़ें, आठ से गुणा करें और फिर 62000 जोड़ें। इस नियम से 20,000 परिधि के एक वृत्त का व्यास ज्ञात किया जा सकता है। अर्थात एक वृत्त का व्यास यदि 20000 हो, तो उसकी परिधि 62232 होगी। उल्लेखनीय है कि चार दशमलव स्थानों पर सटीक और सही गणना के बावजूद सत्य के प्रति आग्रही आर्यभट्ट इस मान को विशुद्ध नहीं मानते। बल्कि आसन्न (निकट) मानते थे। पाई बारे में कई रोचक बातें हैं। जापान खाद्य प्रसंस्करण कंपनी में सिस्टम इंजीनियर के तौर पर काम कर रहे 55 वर्षीय शिगेरू कोंडो ने पाई का पूर्ण मान निकालने की लगातार 90 दिनों तक कड़ी मेहनत की लेकिन पाई की गणना खत्म नहीं हुई। इस दौरान उसने दशमलव के बाद पांच हजार अरब अंकों तक पाई का मान निकाला था। गणितज्ञों का दावा है कि वृत्त की परिधि और व्यास के अनुपात के लिए होने वाला स्थिरांक ग़लत है और उसकी जगह टाउ का इस्तेमाल होना चाहिए। द टाइम्स अखबार के मुताबिक, पाई का अंकीय मूल्य 3.14159265 होता है जो कि गलत नहीं है लेकिन वृत्त के गुणों के साथ इसे जोड़ना गलत है। उन्होंने इसके लिए टाउ सुझाया है जिसका मूल्य पाई का दोगुना यानी 6,28 है।

2589-2566 ई. पूर्व बने गीजा की महान पिरामिड का परिमाप 1760 क्यूबिट और ऊँचाई 280 क्यूबिट थी। इसके अनुपात के आधार पर, कुछ मिस्रविद्य मानते हैं कि पिरामिड बनाने वाले पाई का ज्ञान रखते थे और वृत के गुणधर्मों को निगमित करने वाले पिरामिड जान-बूझकर बनाए। अन्य मतों के अनुसार पाई से सम्बंधित उपरोक्त सुझाव केवल संयोग है, क्योंकि इसका कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है कि पिरामिड बनाने वालों को पाई के बारे में जानकारी थी और चूंकि पिरामिड की विमाएं अन्य कारकों पर भी निर्भर करती हैं।

## पारिस्थितिकी में परिंदे

गौरैया, हमारे घर की एक जानी-मानी चिड़िया। शहरी इलाकों में गौरैया की छह तरह ही प्रजातियां पाई जाती हैं, जो हैं हाउस स्पैरो, स्पेनिश स्पैरो, सिंड स्पैरो, रसेट स्पैरो, डेड सी स्पैरो और ट्री स्पैरो। इनमें हाउस स्पैरो को गौरैया कहा जाता है। यह शहरों में ज़्यादा पाई जाती हैं। आज यह विश्व में सबसे अधिक पाए जाने वाले पक्षियों में से है। लोग जहाँ भी घर बनाते हैं देर सबेर गौरैया के जोड़े वहाँ रहने पहुँच ही जाते हैं। यही गौरैया जो हमारे घरों के अंदर और बाहर हमेशा चहचहाती रहती थी। अब कहीं खो सी गई है। अब शहरों में हमारे घरों में अनाज पड़ा रहता है, लेकिन उसे अपनी चोंच में दबाकर फुर्र से अपने घोसले की तरफ उड़ जाने वाले गौरैया अब दिखाई नहीं देती। 20 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व गौरैया दिवस (World Sparrow Day) मनाया जाता है। हमारी जानी पहचानी चिड़िया गौरैया (Passer domesticus) जो यूरोप और एशिया में सामान्य रूप से हर जगह पाया जाता है।

पारिस्थितिकी में परिंदों का बहुत योगदान है, ये परिन्दे ही जंगल लगाते हैं, कई प्रजातियों के वृक्ष तो तभी उगते हैं, जब कोई परिन्दा इन वृक्षों के बीजों को खाता है और वह बीज उस पक्षी की आहारनाल से पाचन की प्रक्रिया से गुजर कर जब कही गिरते हैं तभी उनमें अंकुरण होता है, साथ ही फलों को खाकर धरती पर इधर-उधर बिखेरना और परागण की प्रक्रिया में सहयोग देना इन्ही परिन्दों का अप्रत्यक्ष योगदान है। कीट-पंतगों की तादाद पर भी यही परिन्दे नियन्त्रण करते हैं, कुल मिलाकर पारिस्थितिकी तन्त्र में प्रत्येक प्रजाति का अपना महत्व है, हमें उनके महत्व को नज़रन्दाज़ करके अपने पर्यावरण के लिए सही नहीं कर रहे। जन्तु विशेषज्ञों का कहना है कि किसी भी प्रजाति को खत्म करना हो तो उसके आवास और उसके भोजन को खत्म कर दो। कुछ ऐसा भी हुआ गौरैया के साथ। शहरीकरण, गांवों का बदलता स्वरूप, कृषि में रसायनिक खादें एंव विषाक्त कीटनाशक गौरैया के खत्म होने के लिए जिम्मेंदार बन गये हैं। फिर भी प्रकृति ने हर जीव को विपरीत परिस्थितियों में जिन्दा रहने की काबिलियत दी है और यही वजह है कि गौरैया की चहक भी हम यदाकदा सुन पा रहे हैं, लेकिन कब तक? इस प्रश्न चिन्ह पर भी हमें ध्यान रखना होगा। अन्यथा गिद्ध की तरह गौरैया को भी हमारे बीच से विलुप्त होते देर नहीं लगेगी।

इस दिवस को लेकर पिछले कुछ वर्षों से स्कूलों-कॉलेजों में आयोजन हो रहे हैं और बच्चों को इनके प्रति जागरूक बनाया जा रहा है। बच्चों को गौरैया संरक्षण के लिए गौरैया होम भी वितरित किये जा रहे हैं, जो एक सराहनीय प्रयास है। हम अपने घरों के अहाते और पिछवाड़े

विदेशी नस्ल के पौधों के बजाए देशी फलदार पौधे लगाकर इन चिड़ियों को आहार और घरौदें बनाने का मौका दे सकते हैं। साथ ही जहरीले कीटनाशक के इस्तेमाल को रोककर, इन वनस्पतियों पर लगने वाले परजीवी कीड़ों को पनपने का मौका देकर इन चिड़ियों के चूजों के आहार की भी उपलब्धता करवा सकते है, क्योंकि गौरैया जैसे परिन्दों के चूजे कठोर अनाज को नहीं खा सकते, उन्हे मुलायम कीड़े ही आहार के रूप में आवश्यक होते हैं। इसके अतिरिक्त अपने घरों में सुरक्षित स्थानों पर गौरैया के घोसले बनाने वाली जगहों या मानव-जनित लकड़ी या मिट्टी के घोसले बनाकर लटकाये जा सकते है।

## जंगल तो ज़रूरी हैं

वनों के लाभ से हम सब परिचित हैं। पेड़-पौधे पृथ्वी के लिए सुरक्षा कवच का काम करते हैं और जंगली जंतुओं को आश्रय प्रदान करने के हमें दवा, लकड़ी और ईंधन आदि प्रदान करते हैं। पेड़ों की जड़ें मिट्टी को जकड़े रखती है और इस प्रकार वह भारी बारिश के दिनों में मृदा का अपरदन और बाढ़ भी रोकती हैं। पेड़, कार्बन डाइ ऑक्साइड अवशोषित करते हैं और ऑक्सीजन छोड़ते हैं जिसकी मानवजाति को सांस लेने के लिए जरूरत पड़ती है। वनस्पति स्थानीय और वैश्विक जलवायु को प्रभावित करती है। वे सभी जीवों को सूर्य की गर्मी से बचाते हैं और पृथ्वी के तापमान को नियंत्रित करते हैं। वन प्रकाश का परावर्तन घटाते हैं, ध्वनि को नियंत्रित करते हैं और हवा की दिशा को बदलने एवं गति को कम करने में मदद करते हैं। 21 मार्च को प्रतिवर्ष अंतर्राष्ट्रीय वानिकी दिवस (International Day of Forests) मनाया जाता है। विश्व वानिकी दिवस मनाने का विचार वर्ष 1971 में यूरोपीय कृषि परिसंघ की 23वीं महासभा में आया। वानिकी के तीन महत्वपूर्ण तत्वों-सुरक्षा, उत्पादन और वनविहार के बारे में लोगों को जानकारियां देने के लिए उसी साल बाद में 21 मार्च के दिन को चुना गया। यह दिवस पहली बार इस उद्देश्य से मनाया गया था कि दुनिया के तमाम देश अपनी वन-सम्पदा की तरफ ध्यान दें और वनों को संरक्षण प्रदान करें, साथ ही अपनी मातृभूमि की मिट्टी और वन सम्पदा का महत्व समझें तथा अपने-अपने देश के वनों और जंगलों का संरक्षण करें।

भारत में वन महोत्सव जुलाई 1950 से ही मनाया जा रहा है। इसकी शुरुआत तत्कालीन गृहमंत्री कुलपति कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने की थी। वर्तमान समय में भारत में 19.39 प्रतिशत भूमि पर वनों का विस्तार है और छत्तीसगढ़ राज्य में सबसे अधिक वन-सम्पदा है उसके बाद क्रमशः मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश राज्य में। भारत सरकार द्वारा वर्ष 1952 में निर्धारित राष्ट्रीय वन नीति के तहत देश के 33.3 प्रतिशत क्षेत्र पर वन होने चाहिए। लेकिन वर्तमान समय में ऐसा नहीं है। वन-भूमि पर उद्योग-धंधों तथा मकानों का निर्माण, वनों को खेती के काम में लाना और लकड़ियों की बढ़ती माँग के कारण वनों की अवैध कटाई आदि वनों के नष्ट होने के प्रमुख कारण है। इसलिए अब समय आ गया है कि देश की राष्ट्रीय निधि को बचाए और इनका संरक्षण करें।

## डाउन सिंड्रोम

डाउन सिंड्रोम बच्चों की एक गंभीर समस्या है, जिससे उनका शारीरिक विकास आम बच्चों की तरह नहीं हो पाता। उनका दिमाग भी सामान्य बच्चों की तरह काम नहीं करता। कई बार उनके व्यक्तित्व में कुछ विकृतियां दिखाई देती हैं। यहाँ ध्यान देने वाली बात यह है कि बस प्यार और अच्छी देखभाल से ऐसे बच्चों को सामान्य जीवन दिया जा सकता है। डाउन सिंड्रोम एक आनुवंशिक या क्रोमोसोम जनित विकार है और ये एक जीवनपर्यन्त स्थिति है जो शरीर में क्रोमोसोम्स का एक अतिरिक्त जोड़ा बन जाने से होती है। सामान्य रूप से शिशु 46 क्रोमोसोम के साथ पैदा होते हैं। 23 क्रोमोसोम का एक सेट शिशु अपने पिता से और 23 क्रोमोसोम का एक सेट वे अपनी मां से ग्रहण करते हैं। डाउन सिंड्रोम से पीड़ित शिशु में एक अतिरिक्त क्रोमोसोम आ जाता है जिससे उसके शरीर में क्रोमोसोम्स की संख्या बढ़कर 47 हो जाती है। यह आनुवंशिक परिवर्तन शारीरिक विकास और मस्तिष्क के विकास के गति को धीमा कर देता है और शिशु में मद्धम से औसत बौद्धिक विकलांगता का कारण बनती है। यह समस्या लड़कों में ज़्यादा देखने को मिलती है। 21 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व डाउन सिन्ड्रोम दिवस (World Down Syndrome Day) मनाया जाता है।

डाउन सिंड्रोम पीड़ित बच्चों की मांसपेशियां सामान्य बच्चों के मुकाबले कम ताकतवर होती हैं। हालांकि आयु बढ़ने के साथ-साथ मांसपेशियों की ताकत बढ़ती रहती है, लेकिन ऐसे बच्चे सामान्य बच्चों की तुलना में बैठना, चलना या उठना सीखने में ज़्यादा समय लेते हैं। इस समस्या से पीड़ित बच्चों को दिल संबंधी बीमारी होने की आशंका ज्यादा होती है। उनका बौद्धिक, मानसिक व शारीरिक विकास धीमा होता है। कई बच्चों के चेहरों पर विशिष्ट लक्षण देखने को मिलते हैं। जैसे कान छोटे होना, चेहरा सपाट होना, आंखों के ऊपर तिरछापन होना, जीभ बड़ी होना आदि। डाउन सिंड्रोम पीड़ित बच्चों की रीढ़ की हड्डी में भी विकृति

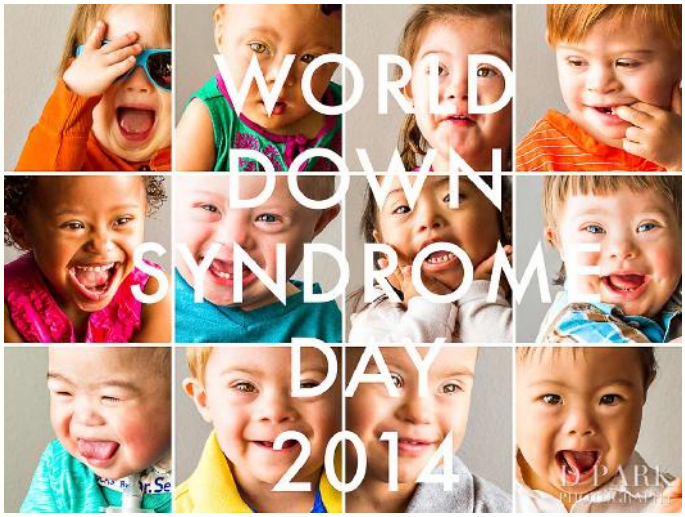

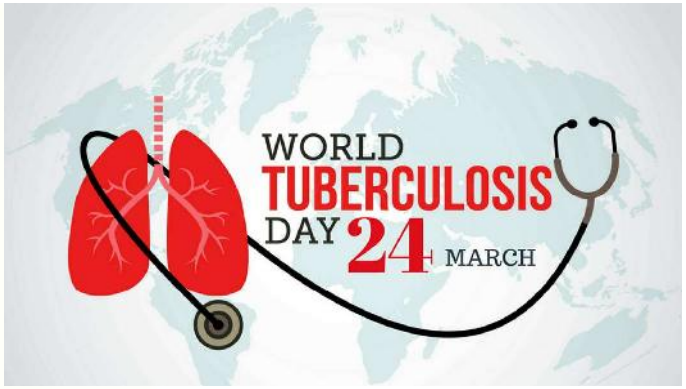


हो सकती है। कुछ बच्चों को पाचन की समस्या भी हो सकती है तो कई बच्चों को किडनी संबंधित परेशानी हो सकती है। इनकी सुनने-देखने की क्षमता कम होती है। डाउन सिंड्रोम को रोका नहीं जा सकता है लेकिन अगर आप डाउन सिंड्रोम वाले शिशु को जन्म देने की आशंका के दायरे में आते हैं या आप इस विकार से पीड़ित बच्चे के माता या पिता है तो दूसरा बच्चा पैदा करने की योजना बनाने से पहले किसी आनुवंशिक काउंसलर से मिला जा सकता है।

## पानी की बात

पानी हमारे जीवन का आधार है और पानी से ही पृथ्वी ग्रह को पानी की उपस्थिति के कारण ही इसे जीवित ग्रहों की श्रेणी में रखा गया है। हमारा ग्रह अधिकांशतः जल से धिरा हुआ है, लेकिन फिर भी यहाँ पीने लायक पानी की कमी महसूस की जाने लगी है। यही कारण है कि ब्राज़ील में रियो डि जेनेरियो में वर्ष 1992 में आयोजित पर्यावरण तथा विकास का संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन विश्व जल दिवस की पहल में की गई। वर्ष 1993 में संयुक्त राष्ट्र ने अपने सामान्य सभा के द्वारा निर्णय लेकर इस दिन को वार्षिक कार्यक्रम के रूप में मनाने का निर्णय लिया इस कार्यक्रम का उद्देश्य लोगों के बीच में जल संरक्षण का महत्व साफ पीने योग्य जल का महत्व आदि बताना था। पानी के महत्व को जानने का दिन और पानी के संरक्षण के विषय में समय रहते सचेत होने का दिन। 22 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व जल दिवस (World Water Day) मनाया जाता है।

विश्व के 1.5 अरब लोगों को पीने का शुद्ध पानी नहीं मिल रहा है। प्रकृति जीवनदायी संपदा जल हमें एक चक्र के रूप में प्रदान करती है, हम भी इस चक्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। चक्र को गतिमान रखना हमारी जिम्मेदारी है, चक्र के थमने का अर्थ है, हमारे जीवन का थम जाना। प्रकृति के ख़जाने से हम जितना पानी लेते हैं, उसे वापस भी हमें ही लौटाना है। अतः प्राकृतिक संसाधनों को दूषित न होने दें और पानी को व्यर्थ न गँवाएँ यह प्रण लेना आज के दिन बहुत आवश्यक है। पृथ्वी का लगभग 71 प्रतिशत सतह को 1.460 पीटा टन (पीटी) (1021 किलोग्राम) जल से आच्छदित है जो अधिकतर महासागरों और अन्य बड़े जल निकायों का हिस्सा होता है इसके अतिरिक्त, 1.6 प्रतिशत भूमिगत जल एक्वीफर और 0.001 प्रतिशत जल वाष्प और बादल (इनका गठन हवा में जल के निलंबित ठोस और द्रव कणों से होता है) के रूप में पाया जाता है। खारे जल के महासागरों में पृथ्वी का कुल 97 प्रतिशत, हिमनदों और ध्रुवीय बर्फ चोटिओं में 2.4 प्रतिशत और अन्य स्रोतों जैसे नदियों, झीलों और तालाबों में 0.6 प्रतिशत जल पाया जाता है। बर्फीली चोटियों, हिमनद व झीलों का जल कई बार धरती पर जीवन के लिए साफ जल उपलब्ध कराता है।

## टीबी उन्मूलन

तपेदिक अथवा क्षयरोग या टीबी (Tuberculosis) एक आम और कई मामलों में घातक संक्रामक बीमारी है जो माइक्रोबैक्टीरिया, आमतौर पर माइकोबैक्टीरियम तपेदिक के विभिन्न प्रकारों की वजह से होती है। क्षय रोग का इतिहास बहुत प्राचीन है। कंकालों के अवशेष दर्शाते है कि प्रागैतिहासिक मानवों (4000 ई.पू.) को टीबी था और शोधकर्ताओं को 3000-2400 ईसा पूर्व की मिस्र की ममियों में तपेदिकीय क्षय मिले हैं। क्षय रोग आमतौर पर फेफड़ों पर हमला करता है, लेकिन यह शरीर के अन्य भागों को भी प्रभावित कर सकता हैं। यह हवा के माध्यम से तब फैलता है, जब वे लोग जो सक्रिय टीबी संक्रमण से ग्रसित हैं, खांसी, छींक, या किसी अन्य प्रकार से हवा के माध्यम से अपना लार संचारित कर देते हैं। ज़्यादातर संक्रमण स्पर्शोन्मुख और भीतरी होते हैं, लेकिन दस में से एक भीतरी संक्रमण, अंततः सक्रिय रोग में बदल जाते हैं, जिनको अगर बिना उपचार किये छोड़ दिया जाये तो ऐसे संक्रमित लोगों में से पचास प्रतिशत से अधिक की मृत्यु हो जाती है। 24 मार्च को प्रतिवर्ष विश्व तपेदिक दिवस (World Tuberculosis Day) मनाया जाता है।

सक्रिय टीबी संक्रमण के आदर्श लक्षण खून-वाली थूक के साथ पुरानी खांसी, बुखार, रात को पसीना आना और वज़न घटना हैं। इसका निदान रेडियोलोजी, आम तौर पर छाती का एक्स-रे, के साथ-साथ माइक्रोस्कोपिक जांच तथा शरीर के तरलों की माइक्रोबायोलॉजिकल कल्चर पर निर्भर करता है। भीतरी या छिपी टीबी का निदान ट्यूबरक्यूलाइन त्वचा परीक्षण और रक्त परीक्षणों पर निर्भर करता है।

देश की राजधानी दिल्ली में हर साल 55,000-57,000 क्षयरोग (टीबी) से पीड़ित नए मरीज़ सरकारी अस्पतालों में आते हैं और यह आंकड़ा देशभर में रोज़ाना तीन करोड़ से ज़्यादा है। नई दिल्ली स्थित लोकनायक अस्पताल के टीबी अधिकारी डॉ.अश्विनी खन्ना ने वर्ल्ड विज़न नामक सामाजिक संस्था की ओर से आयोजित एक कार्यक्रम में बताया कि भारत सरकार की ओर से 'नेशनल स्ट्रेटजी प्लान 2017-2025' के तहत देशभर में टीबी उन्मूलन के लिए व्यापक स्तर पर टीबी उन्मूलन के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं और 2025 तक देश से टीबी का उन्मूलन करने का लक्ष्य चुनौतीपूर्ण ज़रूर है, लेकिन ये लक्ष्य हासिल करना कठिन नहीं है।

**research.org@rediffmail.com**

# प्रकृति के सुरम्य वातावरण में विज्ञान की कार्यशाला

*विगत दिनों सी.वी.रमन सेन्टर फॉर साइंस कम्यूनिकेशन, रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल के सहयोग से विज्ञान प्रसार एवं साइन्स सेन्टर (ग्वालियर) म.प्र. द्वारा 28 जनवरी से 31 जनवरी 2019 तक आयोजित प्रकृति अध्ययन शिविर कैम्प संपन्न हुआ। प्रस्तुत है शिविर के आयोजन और उसके सार्थक पहलुओं की पड़ताल करता यह आलेख–*

बच्चों के लिए विज्ञान विषय पर लिखना बहुत बड़ी जिम्मेदारी होती है, वहीं विज्ञान विषयक प्रायोगिक गतिविधियाँ करना तो और भी चुनौतीपूर्ण है। लिखते हुए या एक्टिविटी के साथ बच्चों को बातचीत के अंदाज़ में विज्ञान समझाते चलना और संवाद करते–करते उनके भीतर वैज्ञानिक सोच पिरोना बहुत बारीक काम है। ऐसा करते समय कई बार यह महसूस हुआ कि सिखाने के कई पुराने तरीकों में कुछ बदलाव जरूरी हैं, समय के अनुसार भी और डिजिटल दुनिया के व्यावहारिक–नैतिक मापदंडों के अनुसार भी। यह शिविर चार दिनों तक प्रकृति के सुरम्य वातावरण में और 50 एकड़ में विस्तारित भोपाल के रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय परिसर में निर्बाध तरीके से चला जिसमें प्रकृति से जुड़े प्रत्येक आयाम की विभिन्न गतिविधियाँ बच्चों को सिखाई गई। इस शिविर में मैंने देखा कि मुख्य स्रोत वैज्ञानिक व वरिष्ठ विज्ञान प्रसारक संध्या वर्मा गाँव–देहात के उन बच्चों के लिए और उनके साथ बड़ी ही आत्मीयता और डूबकर काम कर रही हैं जो प्रायः उपेक्षित ही रह जाते हैं। इन बच्चों के लिए ऐसे शिविरों के आयोजनों से प्रकृति को देखने की नई दृष्टि विकसित होती है और ऐसे शिविरों के माध्यम से इम्प्लांट की गई जानकारी वह भी खुद करके सीखो के अंदाज़ में। वास्तव में विज्ञान को जानने–समझने और समझाने का यही तरीका मुझे सार्थक लगता है, साथ ही इससे हमारे आसपास उपलब्ध प्रकृति की जानकारी को जीवन में सही तरीके से सही जगह उपयोग करने की समझ भी विकसित होती है। यह प्रक्रिया एक नए आत्मविश्वासी व्यक्तित्व को जन्म देती है। आज जब शहरों के बच्चों के पास जानकारियाँ तो पहुँच में हैं लेकिन उन्हें प्रकृति के माध्यम से समझने का माहौल नहीं है ऐसे में ग्रामीण बच्चों के बीच किया गया यह प्रयास आयोजकों द्वारा प्रस्तुत एक मॉडल भी है जिसे गंभीरता से देखा जाना चाहिए, जो शिक्षकों और नए ज़माने के बच्चों के लिए भी बेहद लाभकारी सिद्ध होगा। ऐसे आयोजनों की जानकारी दूर–दराज़ के सभी हिस्सों में भी पहुँचना चाहिए ताकि प्रेरणा और उत्साह से भरे हुए छोटे–बड़े–बुजुर्ग सभी के लिए सुलभ विज्ञान शिक्षण की सोच को एक राह मिले। प्रकृति अध्ययन शिविर में वरिष्ठ चिकित्सक डॉ.वी.के. भारद्वाज ने यह बात शिद्दत से उठाई कि प्रकृति की बात करते समय सबसे पहले प्रकृति या वातावरण हमारे दिल में होना चाहिए क्योंकि यदि हम प्रकृति से मन से जुड़ पायेंगे तभी हम उसे अच्छी तरह समझ सकते हैं। हमारे घर आँगन का वातावरण हमारे मन में संस्कार के बीज बोता है और प्रकृति से बड़ी औषधि कोई भी नहीं। उन्होंने यह भी कहा कि हम पहले अपनी पर्यावरण संबंधी समस्याओं को क्रमबद्ध तरीके से चिहित करना सीखना होगा तत्पश्चात ही उन्हें सुलझाने का काम योजनाबद्ध तरीके से संभव होगा। डॉ. भारद्वाज ने इस अवसर पर बच्चों में लोकप्रिय सोहनलाल द्विवेदी की प्रेरक कविता "कोशिश करने वाले की हार नहीं होती" का भी उल्लेख किया। कार्यक्रम में यूथ होस्टल एसोसिएशन ऑफ इंडिया के अध्यक्ष श्री राजपूत की खास उपस्थिति रही, उन्होंने बच्चों को यूथ होस्टल एसोसिएशन ऑफ इंडिया से जुड़ने की सलाह दी और एक दूसरे और व्यापक फलक में काम कर रहे अन्य क्षेत्रों के विषय–विशेषज्ञों के सर्कल का विस्तार से परिचय दिया। उद्घाटन कार्यक्रम में कार्यशाला को संबोधित करते हुए विश्वविद्यालय के सी.वी.रमन सेन्टर फॉर साइंस

कम्यूनिकेशन के निदेशक राग तेलंग ने कहा कि हमें खुशी है कि कार्यशाला का आयोजन हमारे परिसर में किया जा रहा है, उन्होंने इस संयुक्त उपक्रम की सफलता के लिए आश्वस्त किया। इस अभिनव प्रयास और विश्वविद्यालयीन छात्रों के बीच हुए आयोजन को उन्होंने किशोरों और युवाओं के बीच पुल का काम करने वाला आयोजन निरुपित किया व साइन्स सेन्टर ग्वालियर व विज्ञान प्रसार को इसके लिए बधाई दी। इस कार्यशाला के माध्यम से प्रकृति को नजदीक से समझने आये सतना, टीकमगढ़, रायसेन, उज्जैन एवं सीहोर के ग्रामीण अंचल के स्कूलों के 60 से अधिक विभिन्न किशोर वे के प्रतिभागियों ने शिरकत की।

इस विश्वविद्यालय में या कहें प्रकृति की गोद में बसे इस स्कूल में विज्ञान की विभिन्न प्रकार प्रयोगशालाएं हैं जिनमें शोध और नवाचार का काम होता है और परिसर के रास्तों की लाइटें और उसके अन्दर चलने वाले ई रिक्शा पूरी तरह सौर ऊर्जा से संचालित है। यहाँ एक सौर ऊर्जा पार्क भी है जिसे सब बच्चों ने बड़ी ही उत्सुकता से देखा, शीघ्र ही पूरा परिसर सौर ऊर्जा से संचालित होने की राह पर है। परिसर में 500 से अधिक पेड़-पौधे लगे हैं जिनकी देखभाल और इनसे गिरने वाले पत्तों का प्रबंधन भी परिसर में विश्वविद्यालय परिवार द्वारा ही होता है। इस कार्यशाला ने ज़मीन से जुड़े गाँवों के इन बच्चों को खुलकर बोलने का या कहें खुद को अभिव्यक्त करने का मौका-हौसला दिया जिसकी जितनी भी प्रशंसा की जाये कम है। यह भी एक कारण रहा कि बच्चों ने पूरे उत्साह और आत्मविश्वास के साथ अपनी रचनाओं की प्रस्तुति दी। यह सब लिखते हुए मैं इन्हीं दिनों दिवंगत मेरे मित्र और ओरिगामी के अप्रतिम कलाकार अशोक रोकड़े जी को याद करता हूँ जिनमें ऐसे ज़मीनी बच्चों के साथ बच्चों की तरह घुल मिलकर काम करने का बेइंतहा ज़ज्बा था, ऐसे लोग अब कम ही बचे हैं जो बिना किसी अपेक्षा के वह भी जिंदादिली के साथ और अपनी ही पहल पर समाज में नई दुनिया की तस्वीरें बनाने और उनमें रंग भरने में यकीन रखते हों। अशोक को याद करना और ऐसे लोगों के काम को समाज में रेखांकित करना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है यह सोचते और कहते हुए मुझे संतोष है।

कार्यशाला के समापन अवसर पर बच्चों के गूंजते कलरव के बीच आयोजित कार्यक्रम में आयोजकों और देश के इन भावी वैज्ञानिकों को संबोधित करते हुए सक्रिय विज्ञान चिन्तक और ट्रेनर श्री संजय अग्रवाल ने बच्चों के बनाए अभिनव मॉडलों की भूरि-भूरि प्रशंसा की और सबको बारी से सम्मानित किया। विज्ञान पत्रिकाएँ कैसे तैयार होती हैं और उसका संपादन कैसे किया जाता है इसे 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' पत्रिका के संपादक मंडल के सदस्य मोहन सगोरिया और रवीन्द्र जैन ने मंच से विस्तार से बताया और बच्चों की पत्रिका में दिलचस्पी को सराहा। वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ.एस.आर.अवस्थी की बच्चों के बीच सक्रियता ऐसी रही कि संध्या वर्मा जी ने उन्हें पिता समान निरुपित किया और उम्मीद ज़ाहिर की कि उनका मार्गदर्शन हमेशा की तरह विज्ञान की गतिविधियों में मिलता रहेगा। अफ्रीकी देश धाना से आये विश्वविद्यालय में अध्ययनरत छात्र माइकल अमोको सहित अन्य भारतीय छात्रों व अलुमिनाय जैसे संदीप पोद्दार, शिशिर सराठे, वैशाली, आयुषी से मेरी लम्बी बातचीत हुई। ये सभी साइंस ग्रुप इग्नाइटेड माइंड्स के सदस्य हैं, इन सबने अपने दिलचस्प संस्मरण मुझसे साझा किये। सबने खुशी जताते हुए कहा कि यह अच्छा है कि ऐसे कैम्प जीवंत अहसास के माध्यम से सिखाने के उपक्रम होते हैं, शिक्षा में सिर्फ पढ़ने को अंतिम लक्ष्य मान लिया जाता है जबकि विज्ञान के आयाम देखने, सुनने, छूने से ही समझ आते हैं, आप चीज़ों को विजुअलाइज़ करना सीखते हैं, यह प्रक्रिया विज्ञान की जटिलता को सरल करती है जबकि वहीं किताबों में बातें निष्प्राण रूप में लिखी प्रतीत होती होती हैं। रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय से सम्बद्ध युवाओं के समूह इग्नाइटेड माइंड्स की प्रणेता संगीता जौहरी व दीप्ति जायसवाल ने इस आयोजन में बच्चों से विज्ञान प्रसार की ज़रूरत के बारे में विस्तार से बातचीत की और उन्हें आगे की यात्राओं में साथ लेकर चलने के प्रति आश्वस्त किया। उल्लेखनीय है इग्नाइटेड माइंड्स जैसे समूह की संकल्पना विश्वविद्यालय के चांसलर संतोष चौबे जी ने एक कार्यक्रम के दौरान हम सबसे साझा की थी जो अब अस्तित्वरूप में आयी है। इस अवसर पर साइन्स सेन्टर द्वारा स्व-क्रिएशन के माध्यम से निर्मित हेंड मेड की फाइल व हेण्ड बेग के प्रथम उत्पादों का लोकार्पण भी किया गया। सबका आभार बी.एल. मलैया ने किया। विश्वविद्यालय परिसर में बच्चों की समुचित व्यवस्था का भार ऋत्विक चौबे, सतीश अहिरवार, राकेश मन्नान, रामदास, रवि व अन्य ने मुख्य रूप से संभाला।

पूरे चार दिन हमारा रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय परिसर एक नई उर्जा से सराबोर रहा, इस दौरान बच्चों ने पेड़-पौधों के इर्द गिर्द खूब फोटो खींचे, प्रकृति को जाना, खुलकर खिलखिलाए, खेल-खेल में विज्ञान सीखा, दुनिया को जाना। जी हां ! खेल-खेल में दुनिया को जानना ही एक सही और वैज्ञानिक तरीका है और इसी तरीके से ही जीवन में जीवन की सच्ची खुशी को ढूंढा और समझा जा सकता है।

**raagtelang@gmail.com**

## रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में हर्षोल्लास से मनाया गया 70वां गणतंत्र दिवस

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में 70 वें गणतंत्र दिवस के अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.ए.के.ग्वाल और कुलसचिव डॉ. विजय सिंह द्वारा प्रातःकालीन बेला पर ध्वजारोहण किया गया। इस अवसर पर नेवल विंग के एनसीसी कैडेट्स ने एनसीसी ऑफीसर सब लेफ्टिनेंट मनोज मनराल के नेतृत्व में राष्ट्रध्वज को सलामी दी। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. ग्वाल ने संबोधित करते हुए कहा कि आज के दिन जो जोश और ऊर्जा हमारे देश के युवाओं में दिखाई देती है वह पूरे वर्ष एक समान रूप में प्रवाहमान होनी चाहिए। आज पूरे विश्व की नज़रें भारत की तरफ हैं, उन्हें अब हमसे उम्मीद है कि हम पूरे विश्व का नेतृत्व करनें में सक्षम हैं इसलिए अब हमारे युवाओं का दायित्व और भी बढ़ जाता है कि उन उम्मीदों को पूरा करने में जी-जान लगा दें और एक नई विश्व शक्ति के रूप में उभर कर सामने आएं। यह विश्वविद्यालय देश में शिक्षा के नित नए आयाम गढ़ता आ रहा है। इस मौके पर विश्वविद्यालय के कुलसचिव डॉ. विजय सिंह ने विद्यार्थियों को अनुशासन में रहते हुए देश में अपने योगदान देने की बात कही। साथ ही सामाजिक कार्यों से जुड़कर शिक्षा के सभी उद्देश्यों को पूरा करने की कोशिश की जानी चाहिए। विश्वविद्यालय के बीपीटी के विद्यार्थी मौसमीन ने गणतंत्र दिवस के अवसर पर अपने विचार प्रस्तुत किये। विद्यार्थियों ने राष्ट्रभक्ति से ओतप्रोत समूह गान प्रस्तुत किया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के एकडेमिक डीन डॉ. संजीव गुप्ता, फैकल्टी और बड़ी संख्या में विद्यार्थी उपस्थित थे। मंच का संचालन छात्र पवन साव और छात्रा अलवीरा खान ने किया।

## दस दिवसीय तकनीकी प्रशिक्षण का आयोजन

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में सॉफकान इंडिया प्राईवेट लिमिटेड द्वारा दस दिवसीय तकनीकी प्रशिक्षण का आयोजन किया गया। इंजीनियरिंग (मैकेनिकल, सिविल, कम्प्यूटर साइंस, इलेक्ट्रिकल एण्ड इलेक्ट्रॉनिक्स, इलेक्ट्रॉनिक्स एण्ड कम्युनिकेशन), बीएससी (कम्प्यूटर साइंस, आईटी) तथा बीसीए के 226 विद्यार्थियों ने इस प्रशिक्षण सत्र में भाग लिया। सॉफकान इंडिया प्राईवेट लिमिटेड नोएडा को तीन दशकों का तकनीकी प्रशिक्षण का व्यापक अनुभव है। इनके प्रशिक्षण कार्यक्रमों में लैब में प्रैक्टिकल के माध्यम से प्रशिक्षण दिया जाता है। इन प्रशिक्षणों में सिमुलेशन किट्स का भी प्रयोग किया जाता है। दस दिवसीय इस प्रशिक्षण में मैकेनिकल इंजीनियरिंग के विद्यार्थियों ने आटोकैड के माध्यम से मैकेनिकल डिजाइन मैथेडोलॉजी, इलेक्ट्रिकल एण्ड इलेक्ट्रानिक्स व इलेक्ट्रॉनिक्स एण्ड कम्युनिकेशन के विद्यार्थियों ने पीएलसी व स्कोडा, सिविल इंजीनियरिंग के विद्यार्थियों ने आटोकैड के माध्यम से सिविल डिजाइन मैथेडोलाजी, कम्प्यूटर साइंस के विद्यार्थियों ने ओरेकल व एंड्राइड तकनीक का व्यापक प्रशिक्षण प्राप्त किया। सॉफकान इंडिया प्राईवेट लिमिटेड के भोपाल कार्यालय से चेतन चौहान व उनकी टीम ने यह प्रशिक्षण प्रदान किया। विद्यार्थियों को इस प्रशिक्षण के सर्टिफिकेट भी प्रदान किये गये। फैकल्टी ऑफ इंजीनियरिंग एण्ड टेक्नॉलॉजी के डीन डॉ. संजीव गुप्ता ने इस प्रशिक्षण कार्यक्रम को विद्यार्थियों के कैरियर के लिये महत्वपूर्ण बताया। नई तकनीकों को जानने से उनके कौशल का विकास होगा। इस प्रशिक्षण का आयोजन रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय के ट्रेनिंग एण्ड प्लेसमेंट विभाग ने किया। विश्वविद्यालय के ट्रेनिंग एण्ड प्लेसमेंट हेड अभिषेक श्रोती ने कहा कि भविष्य में भी इस तरह के नई तकनीकों पर आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाएगा।

## प्रकृति शिविर का समापन

साइंस सेन्टर (ग्वालियर) म.प्र. द्वारा विज्ञान प्रसार के सहयोग से रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में आयोजित प्रकृति अध्ययन शिविर के समापन सत्र को संबोधित करते हुए मुख्य अतिथि संजय अग्रवाल डिप्टी कमीश्नर आयकर विभाग भारत सरकार आयकर अधिकारी प्रशिक्षण संस्थान भोपाल ने कहा कि हमारी संस्कृति के अनेक तीज त्यौहार प्रकृति ऋतु परिवर्तन के समय मनाये जाते है, ताकि ऋतु बदलने के साथ हमारा खान पान भी बदल सके। उन्होंने ऐसे अनेक त्यौहार, शरद पूर्णिमा, संक्रांति आदि का जिक्र किया। चारों दिवस में शिविर में कराई गई गतिविधियों को प्रतिभागियों ने प्रदर्शनी के माध्यम से प्रस्तुत किया। आठ समूह में विभाजित प्रतिभागियों के प्रत्येक समूह ने अनेक नवाचार करते हुए प्रयोग किये तथा उन्हें प्रदर्शनी में लगाया। प्रदर्शनी में प्रतिभागियों ने अनेक पोस्टर, संग्रहण, पत्तियों के चिड़ियाघर तथा गतिविधियों को प्रदर्शित किया।

प्रकृति अध्ययन शिविर की मुख्य स्रोत विद्वान संध्या वर्मा ने बताया कि इस चार दिवसीय शिविर में लगभग 40 गतिविधियॉ कराई गई इसमें एक तरफ जहाँ अनेक उपकरण बनवाये गये वही अनेक गतिविधियों को कराके उनके परिणाम निकाले गये। सभी गतिविधियॉ कम लागत के प्रयोगों पर आधारित थी जिसमें आस पास उपस्थित सामग्री से प्रयोग किये जा सकते है। प्रतिभागियों को शिविर के दौरान प्रकृति भ्रमण हेतु भोजपुर तथा भीमबेटका ले जाया गया। यहाँ उन्होंने जाना कि किस प्रकार पानी के कटाव से चट्टानों ने राक शेल्टर का रूप लिया तथा उन्होंने यहॉ अलग-अलग समय में बनाये गये भित्ति चित्रों को देखा तथा समझा। गाइड विमल कुमार राय ने प्रतिभागियों को विस्तृत जानकारी दी। भ्रमण के दौरान प्रतिभागियों ने पेड़ पौधों की पत्तियों, बीज, फूल, मिट्टी, जल, पत्थर आदि के नमूने भी एकत्रित किये तथा उनसे प्रयोग किये। प्रतिभागियों को अलग अलग गतिविधियों के पुरस्कार दिये गये तथा चारों दिन की गतिविधियों की जो प्रदर्शनी समूहों द्वारा लगाई गई उसमें भी प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा प्रोत्साहन पुरस्कार दिया गया। कार्यक्रम में स्वागत विश्वविद्यालय के राग तेलंग निदेशक सी.वी.रमन विज्ञान संचार केन्द्र, रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय ने किया था उन्होंने पर्यावरण आधारित कविता ''कटा पेड़'' सुनाई। समापन सत्र में विश्वविद्यालय द्वारा निकलने वाली पत्रिका ''इलेक्ट्रानिकी आपके लिए'' के बारे में श्री मोहन सगोरिय वरिष्ठ सह संपादक ने अवगत कराया। कार्यक्रम का समन्वयन अभिनव दुबे रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय तथा कमल दिवेवार साइन्स सेन्टर (ग्वालियर) म.प्र. ने किया। कार्यक्रम में विश्वविद्यालय के रवीन्द्र जैन तथा डॉ.एस.आर. अवस्थी भी उपस्थित रहे।

## डॉ.सी.वी.रामन विश्वविद्यालय खंडवा में विज्ञान संचार केन्द्र स्थापित

डॉ.सी.वी.रामन विश्वविद्यालय खंडवा में विगत दिनों विश्वविद्यालय में कुलपति प्रो.अमिताभ सक्सेना की अध्यक्षता में सी.वी. रमन विज्ञान संचार केन्द्र की स्थापना की गई, इस अवसर पर विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार रवि चतुर्वेदी भी उपस्थित थे। केंद्र के संचालन और संयोजन के लिए विश्वविद्यालय की प्रोफेसर एवं आई.टी. विज्ञानी डॉ.भावना बाजपेई साथ-साथ विभिन्न फेकल्टी के विषय विशेषज्ञों की एक टीम कार्य करेगी। सी.वी.रामन विज्ञान संचार केन्द्रों के मूलभूत उद्देश्यों में विश्वविद्यालय समेत स्कूल व कॉलेज के छात्रों, शिक्षकों में विज्ञान के प्रति अभिरुचि का विकास करना तो है ही साथ ही लोकप्रिय विज्ञान विषयों पर केंद्रित व्याख्यान, कार्यशाला, विज्ञान संचारकों के मध्य आपसी संवाद - संपर्क, विभिन्न मीडिया मंचों पर विज्ञान सम्बन्धी आलेखों का प्रकाशन-प्रसारण, विज्ञान संबंधी विविध गतिविधियाँ प्रमुख है।

केंद्र गठन के लिए सी.वी.रामन विज्ञान संचार केन्द्रों के राष्ट्रीय संयोजक राग तेलंग ने बैठक के आयोजन की रूपरेखा पर प्रकाश डाला। उन्होंने जानकारी दी कि आईसेक्ट ग्रुप के विश्वविद्यालयों के फाउंडर व प्रणेता सर्वश्री संतोष चौबे जी की भावना को साझा किया गया कि स्थानीय एवं देशभर की अन्य सक्रिय विज्ञान संस्थाओं/संगठनों से संसाधन व लेखक-पाठक वर्ग को साझा करते हुए आईसेक्ट ग्रुप के विश्वविद्यालयों में सक्रिय विज्ञान गतिविधियों का वातावरण तैयार हो और हम सब मिलकर समग्र विज्ञान चेतना का लक्ष्य हासिल कर सकें। बैठक के अध्यक्ष प्रो. अमिताभ सक्सेना, कुलपति डॉ.सी.वी.रमन विश्वविद्यालय खंडवा ने इस अवसर पर अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि प्राचीन भारत के विज्ञान का आधुनिक विज्ञान की यात्रा में महत्वपूर्ण योगदान रहा है, हमें इस तथ्य को गहराई से समझना होगा ताकि हम विद्यार्थियों में विज्ञान के नवाचारों के प्रति आत्मबल व साहस का संचार कर सकें और अपनी विरासत के प्रति गौरव के भाव से नए समाज के निर्माण में अपनी भूमिका दर्ज कर सकें। रजिस्ट्रार रवि चतुर्वेदी ने सी.वी.रामन विज्ञान संचार केन्द्र के गठन पर प्रसन्नता ज़ाहिर करते हुए कहा कि उनका पूरा प्रयास रहेगा कि केंद्र लगातार सक्रिय भूमिका में बना रहे और छात्रों में विज्ञान और अन्य विषयों के प्रति के प्रति जिज्ञासा का भाव रखते हुए दृष्टि संपन्न बनें और जीवन में आगे बढ़ें। इस अवसर पर प्रख्यात लेखक और विज्ञान संचारक के.आर. शर्मा विज्ञान की जीवन में ज़रूरत विषय पर रोचक व्याख्यान हुआ। खंडवा के वरिष्ठ विज्ञान शिक्षक एम.आर.मंडलोई भी विशेष तौर पर उपस्थित थे।

●

मशहूर फिल्म अभिनेता राहुल राय डॉ.सी.वी.रामन विवि पहुँचे। उन्होंने युवाओं के साथ घंटों बातें की और युवाओं के सवालों के जवाब भी दिए। राहुल राय को अपने बीच पाकर युवा उत्साहित नज़र आए। राहुल राय डॉ.सी.वी.रामन विवि के रेडियो रामन में चर्चा के दौरान फिल्मों में अपनी वापसी, फिल्मी दुनिया के बदलाव और अपने जीवन की बातें साझा की। इस दौरान विवि के कुलसचिव गौरव शुक्ला सहित विवि परिवार के सदस्य उपस्थित थे।

## युवाओं का इग्नाईटेड माइंड्स साइंस क्लब प्रारंभ

रबिन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में हाल ही में विज्ञान के प्रचार-प्रसार को समर्पित युवाओं के नवगठित ''इग्नाईटेड माइंड्स साइंस क्लब'' की मीटिंग का आयोजन किया गया। इस क्लब का गठन विश्वविद्यालय के एल्युमिनाई द्वारा किया गया है। यह क्लब विपनेट (विज्ञान प्रसार नेटवर्क) से संबद्ध है। ज्ञात हो कि विज्ञान प्रसार (वि.प्र.) विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार के अधीन एक स्वायत्तशासी संस्था है। क्लब का उद्देश्य विश्वविद्यालय समेत स्कूल व कॉलेज के छात्रों, शिक्षकों में विज्ञान के प्रति अभिरुचि का विकास करना है, साथ ही लोकप्रिय विज्ञान विषयों पर केंद्रित व्याख्यान कार्यशाला का आयोजन, विज्ञान संचारकों के मध्य आपसी संवाद, संपर्क, विभिन्न मीडिया मंचों पर विज्ञान सम्बन्धी आलेखों का प्रकाशन, प्रसारण, विज्ञान संबंधी विविध गतिविधियाँ का संचालन है। सभी विज्ञान संस्थानों के साथ मिलकर विज्ञान चेतना के लक्ष्य को हासिल करना इस क्लब का मूलभूत उद्देश्य है। विश्वविद्यालय के विभिन्न संकायों के विषय विशेषज्ञों की एक टीम क्लब के मार्गदर्शक की भूमिका में कार्य कर रही है। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.ए.के. ग्वाल, कुलसचिव डॉ. विजय सिंह, राग तेलंग, डॉ. संगीता जौहरी, डॉ. दीप्ति माहेश्वरी के साथ साथ क्लब के संयोजक युवा विज्ञान कर्मी संदीप पोद्दार तथा वरिष्ठ सदस्य सौरभ सिंह, शिशिर सराठे, बलवंत सराठे, वैशाली सिंह आदि उपस्थित रहे।

## 34वें इंटर यूनिवर्सिटी युवा महोत्सव

डॉ.सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय के विद्यार्थी ने 34वें इंटर यूनिवर्सिटी युवा महोत्सव में भाग लेकर देश भर के विवि के प्रतिभागियों में तीसरा स्थान प्राप्त किया है। वेस्टर्न इंस्ट्रूमेंटल सोलो में विद्यार्थी का चयन अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हुआ। चंडीगढ़ में हुए इस आयोजन में देश के 113 विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने भाग लिया था। डॉ.सी.वी.रामन विश्वविद्यालय के कुलसचिव गौरव शुक्ला ने बताया कि एआईयू के सेंट्रल जोन का युवा महोत्सव संबलपुर विवि उड़िसा में 7 जनवरी से 11 जनवरी 2019 तक आयोजित किया गया था। इसमें डॉ.सी.वी.रामन् विश्वविद्यालय के बीबीए के छात्र अरिहंत उपाध्याय ने सेंट्रल जोन के इंटर यूनिवर्सिटी युवा महोत्सव में बाजी मारी थी। विवि को कल्चरल प्रोसेशन में दूसरा और वेस्टर्न इंस्ट्रूमेंटल सोलो में तीसरा स्थान मिला था। विवि के बीबीए के छात्र अरिहंत उपाध्याय ने वेस्टर्न इंस्ट्रूमेंटल सोलो में शानदार प्रस्तुति दी और तीसरा खिताब अपने नाम किया है। इसके बाद फरवरी में चंडीगड़ में होने वाले राष्ट्रीय युवामहोत्व में सीवीआरयू के छात्र ने वेस्टर्न इंस्ट्रूमेंटल सोलो में तीसरा स्थान प्राप्त किया है। यह बड़े हर्ष की बात है कि अरिहंत ने राष्ट्रीय स्तर पर विवि का नाम रोशन किया है। इसके बाद अब उसका चयन अंतर्राष्ट्रीय स्तर के युवा उत्सव में हुआ है जो विदेश में आयोजित किया जाएगा, जिसमें छात्र शामिल होगा। विवि के कुलपति प्रो. आर.पी.दुबे, सम-कुलपति प्रो.पी.के.नायक, एआईयू प्रभारी डॉ. काजल मोईत्रा और टीम मैनेजर संदीप सिंह ने बधाई दी।

## सी.वी.रामन विश्वविद्यालय, कोटा, बिलासपुर

*गणतंत्र दिवस के उपलक्ष्य में डॉ.सी.वी.रामन विश्वविद्यालय के क्षेत्रीय कार्यालय जगदलपुर में दिनांक 24 जनवरी से 26 जनवरी तक विभिन्न प्रतियोगिताएं जिसमें मेहंदी, रंगोली, जलेबी दौड़, सुई धागा, क्वीज के साथ नृत्य, गायन और नाटक का आयोजन किया गया जिसमें सभी छात्र-छात्राओं ने बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। गणतंत्र दिवस के झंडावंदन के बाद सभी विजेताओं को पुरस्कृत किया गया।*

*डॉ.सी.वी.रामन विवि में दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। यह आयोजन लाइव साइंस और ग्रामीण प्रौद्योगिकी विभाग दारा जैव प्रौद्योगिकी एवं समग्र कृषि हेतु नवीन तकनीक विषय पर आयोजन किया गया था। इस अवसर पर मुख्यवक्ता के रूप में सेवा शिक्षण संस्थान सोलन हिमाचल प्रदेश के डायरेक्टर डॉ.राजेश कपूर, मिल्क रिचर्स कार्पोरेशन,रायपुर छ.ग. के डायरेक्टर प्रो.राजेंद्र तम्बोली, विवि के सम कुलपति प्रो.पी.के थे। नायक कोटा एसडीएम कीर्तिमान सिंह राठौर, कुलसचिव गौरव शुक्ला, प्राचार्य प्रो.मनीष उपाध्याय, प्रो श्वेता साव सहित बड़ी संख्या में क्षेत्र के किसान और शोधार्थी उपस्थित थे।*